卐

सोहन काव्य कथा-मंजरी

भाग ४

|| जय गुरु पन्ना || || जय गुरु सोहन || || जय गुरु सुदर्शन ||

卐 卐

स्वाध्याय संघ के आद्य प्रणेता

पूज्य प्रवर्त्तक गुरूदेव श्री पन्नालाल जी म.सा. की 116 वीं

जन्म जयन्ति के उपलक्ष में स्वाध्यायार्थ उपहार

मेहता, विजयनगर ✆ 230527

प्रकाशक
श्री श्वे. स्था. जैन स्वाध्यायी संघ,
गुलाबपुरा, (राज.)

रचनाकार
स्वाध्याय शिरोमणि, प्रवर्तक
श्री सोहनलालजी म० सा०

सोहन काव्य कथा-मंजरी

भाग ४



रचनाकार
प्रवर्तक श्री सोहनलालजी म० सा०



सम्पादक
प्रवचन प्रभाकर श्री वल्लभमुनि जी म० सा०



प्रथम संस्करण
अप्रेल १९९१



मूल्य : दस रुपये



मुद्रक :
स्वस्तिक प्रिण्टर्स,
हाथी भाटा, अजमेर
फोन : 20374

✻ द्रव्य सहायक ✻

पूज्य मामा सा० श्री मोतीलालजी बोहरा रास निवासी
की स्मृति में उनके भाणेज
श्रीमान् मिलापचंदजी, पदमचंदजी, अजितकुमारजी,
अशोककुमार जी एवं समस्त खाविया
परिवार की ओर से :—

फर्म :—जसराज मिलापचन्द सर्राफ
मु. पो. गोविन्दगढ़-305201
जिला अजमेर

(2) एम. अशोककुमार एण्ड कम्पनी
पोस्ट बाक्स 151
10/A/295 डाक बंगला रोड
इचलकरणजी (महाराष्ट्र) 416115

इस अर्थ सहयोग के लिए श्री जैन स्वाध्यायी संघ हार्दिक आभार प्रदर्शित करता है।

प्रकाशकीय

साहित्य की विधाओं में कथा उतनी ही प्राचीन है जितनी कि स्वयं मानव सृष्टि।

जब दो व्यक्ति मिलते हैं एवं परस्पर कुशल क्षेम के समाचार पूछते हैं, तब वे अपनी ही कहानी कहते हैं या सुनाते हैं। यह कहानी का उद्‌गम स्रोत है।

तब से अब तक इस कहानी ने एक लम्बी दूरी की यात्रा तय की है। कथा से कहानी, फिर लघु कथा व बोध कथा के रूप में विकसित होकर अब वह अ-कहानी की सीमा को स्पर्श करने लगी है।

किसी भी आयु के व्यक्ति के लिए कहानी सुनना या पढ़ना आनन्ददायक होता है। विविध घटनाक्रम के साथ संजोए गए पात्रों के गतिमान जीवन के माध्यम से मानो पाठक अपनी ही कहानी पढ़ता है। वह घटना भी अपनी बात कहकर पाठक के मन में निराकार रूप से पैठकर उसे आन्दोलित करता रहता है अतः उसकी अनुगूंज तो लम्बे समय तक सुनाई पड़ती रहती है। इस प्रकार कहानी जीवन से एवं जीवन मूल्यों की समृद्धि का माध्यम बनती है।

कथा का मूल आधार घटना का चमत्कार होता है तथा घटना-चमत्कार किसी धार्मिक, नैतिक या साहसिक मूल्य की स्थापना करता है। अति प्राचीनकाल में लिखी गई पंचतंत्र, हितोपदेश, वैताल पच्चीसी, सिंहासन बत्तीसी आदि की कथाएं नीति की शिक्षा प्रदान करने वाली रही हैं जिनसे व्यक्ति व समाज के जीवन को एक दिशा मिली है। उनमें वर्णित व्यक्ति एकाकी न होकर सम्पूर्ण समाज के एक प्रतिनिधि के रूप में उपस्थित होता है इसलिए पाठक उसके जीवन से प्रेरणा प्राप्त कर पाते हैं। यद्यपि कथा का प्रस्थान बिन्दु व्यक्ति है किन्तु गन्तव्य तो समाज ही होता है।

इस कथा-शिल्प के साथ यदि काव्यात्मकता का भी मधुर मेल हो जाय तो सोने में सुगंध आ जाती है। गेयतत्व का मेल होने के कारण, माधुर्य में अभिवृद्धि होने से उसकी प्रभावशीलता द्विगुणित होकर पाठक के मन पर स्थायी असर कर जाती है।

प्रस्तुत काव्यात्मक कथा-संकलन के कथा-शिल्पी विद्वद्वरेण्य, परमश्रेष्ठ, मधुरवक्ता, आशुकवि गुरुवर्य श्री सोहनलालजी म० सा० एक ऐसे ही अमर कथाकार हैं जिन्होंने अपनी कथाओं के माध्यम से तर्क जाल की भांति उलझे हुए मनुष्य के मन की समस्याओं को सुलझाया है, सांसारिक व्यामोह से उसे मुक्त कर मानवीय संवेदनाओं की अनुभूति से उसे सम्पन्न बनाया है और इस प्रकार स्वस्थ अनासक्त एवं समर्पित व्यक्ति का शुद्ध आचार वाले समाज का निर्माण किया है।

वि० सं० २०४८ का वर्ष श्री स्वाध्यायी संघ के आद्य-संस्थापक, राजस्थान केसरी, श्रद्धेय गुरुवर्य श्री पन्नालालजी म० सा० का जन्मशती वर्ष था। इस समय हमारी आस्था के केन्द्र स्वाध्याय-शिरोमणी श्रद्धेय गुरुवर्य श्री सोहनलालजी म० सा० ने अपने जीवन के ७७ वें वसन्त में प्रवेश कर अपने महिमा-मंडित जीवन से हमें गौरवान्वित किया है।

पूज्य गुरुदेव के अनुयायी भक्तों की यह हार्दिक अभिलाषा थी कि उनके अब तक के प्रकाशित व अप्रकाशित काव्यात्मक कथानकों को—जो लगभग ३०० से भी अधिक हैं- क्रमशः प्रकाशित कराया जाय ताकि पाठक उनसे समुचित लाभ उठा सकें एवं साहित्य के अनुसंधित्सुओं के लिए भी पथचिह्न बन सकें। वर्तमान दूषित वातावरण में युवकों को सत्साहित्य उपलब्ध नहीं होने से वे घटिया व चरित्रहन्ता साहित्य पढ़कर अपना समय नष्ट करते हैं उन्हें भी व्यवहार व धर्मनीति परक साहित्य सुलभ कराना भी इसका एक उद्देश्य रहा है।

इसी भावना के अनुसार पूज्य गुरुदेव श्री द्वारा रचित कथानकों को क्रमशः प्रकाशित करने की योजना बनी। सोहन-काव्य कथा मंजरी के तीन भाग वि० सं० २०४४-४५ में प्रकाशित हो चुके हैं, जिन्हें पाठकों ने काफी सराहा है। इसका यह चौथा पुष्प पाठकों को सादर समर्पित करते हुए परम हर्ष है।

इस संकलन को तैयार करने में वि० सं० २०४७ का चातुर्मास हमारे लिए स्मरणीय है। स्वाध्याय शिरोमणि आशुकवि, मरुधर छवि, मधुर प्रवक्ता पं० रत्न श्रद्धेय प्रखर प्रवर्तक पूज्य गुरुदेव श्री सोहनलालजी म० सा० ठाणा ६ का चातुर्मास अजमेर क्षेत्र को सौभाग्य प्राप्त हुआ। उसी चातुर्मास में इस काव्य-कृति का संकलन किया गया था। इस संकलन को तैयार करने में हमें ओजस्वी वक्ता, प्रखर प्रतिभा के धनी प्रवचन प्रभाकर श्रद्धेय वल्लभ मुनिजी म० सा० का हार्दिक सहयोग मिला जिन्होंने आद्योपान्त सभी कथानकों को पढ़कर आवश्यकीय सुझावों से लाभान्वित किया है।

श्रीमान् मिलापचंदजी, पदमचंदजी, अजितकुमारजी, अशोक कुमारजी एवं समस्त खाबिया परिवार गोविन्दगढ़ ने अपने पूज्य मामा सा. श्री मोतीलाल जी बोहरा रास निवासी की स्मृति में अपनी ओर से अर्थ सहयोग दिया व इस पुस्तक का प्रकाशन करवाया इसके लिए मैं उनका आभार प्रदर्शित करता हूँ।

आशा है पाठकगण इस काव्य कथामाला से लाभ प्राप्त कर जीवन में नैतिकता विकसित कर सकेंगे, इसी विश्वास में—

गुलाबपुरा —नेमीचन्द खाबिया, मन्त्री
फाल्गुन पूर्णिमा सं० २०४७ श्री श्वे० स्था० जैन स्वाध्यायी संघ

भूमिका

हमारे देश का कथा-साहित्य अति प्राचीन रहा है। उपनिषदों की रूपक कथाएँ, महाभारत के उपाख्यान तथा जातक कथाएँ नीति धर्म की शिक्षा के लिए प्रेरक रही है। वे मात्र मनोरंजन के लिए ही नहीं लिखी गई, उनमें जीवन के गंभीर तत्वों की समालोचना भी उपलब्ध होती है। प्राचीन आख्यानों में इतिवृत्त की प्रधानता से वे कथाएँ मानव-जीवन से जुड़कर जीवन की जटिल समस्याओं का समाधान भी प्रस्तुत कर सकने में समर्थ है अतः भारतीय साहित्य की वह अनमोल निधि है।

प्रारम्भ में कथाएँ मौखिक परम्परा से चलती रही। अनेक वयोवृद्ध एवं अनुभवी लोग घरों में या चौपालों पर बैठकर श्रोताओं को कथा सुनाते रहे। राजा विक्रमादित्य, भरथरी राजा, भोज, मुंज, उदायन आदि न्याय-नीति परायण राजाओं की कथाएं बड़े चाव से कही एवं सुनी जाती थी। उनमें राजाओं की वीरता प्रेम, न्याय, विद्या, वैराग्य, चातुर्य, उदारता आदि का उल्लेख होता था। परोक्ष रूप से शौर्य एवं पराक्रम की तथा न्याय-नीति परायण जीवन जीने की, उन कथाओं से प्रेरणा प्राप्त होती थी। भारतीय जनता का मानस सदा से ही सरल एवं सहजरूप से आस्थावान रहा है अतः इन कथाओं का उसके दिलों पर पूरा-पूरा प्रभाव पड़ा है।

शनैः-शनैः उन कथाओं के नायक राजा और रानी के समान श्रावक व श्राविका भी होने लगे। साधना-पथ की दुरुहता एवं धार्मिक-दृढ़ता को केन्द्र मानकर कथाओं का निर्माण होने लगा। सामान्य जन को भी दृष्टिपथ में रखकर घटनाओं का संयोजन कर कथाएँ निर्मित होने लगीं। निश्चित रूप से सामान्य जन-समूह को पापों से निवृत्तकर पवित्र कार्यों में नियोजित करना ही उनका लक्ष्य था। तत्कालीन सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक व सांस्कृतिक परिवेश पर भी उनसे पर्याप्त प्रकाश पड़ता था। वे कथाएँ अध्यात्म-प्रधान देश—भारत के वातावरण एवं आदर्शों के अनुरूप लिखी गई फलतः पवित्र जीवन जीने की उनसे प्रेरणा मिली। ये कथाएँ तार्किकता व वैज्ञानिकता से हटकर शुद्ध आस्था व विश्वास के धरातल पर रची गई। आज भी इस प्रकार की कथाएं बहुतांश में

लिखी व पढ़ी जा रही हैं। कभी-कभी अति मानुषिक घटनाओं को भी उनसे जोड़कर उन्हें रोचक बनाया जाता है।

मानव का सबसे बड़ा मित्र उसका संवेदनशील हृदय होता है। उत्तम संस्कार रूपी बीज वपन के लिए श्रद्धावान हृदय श्रेष्ठ क्षेत्र है। इस हृदय में स्थित गूढतम भावों को उत्तेजित व परिष्कृत करने का कार्य जितनी कुशलता से कथा या कहानी से किया जा सकता है उतना साहित्य की अन्य विधाओं से नहीं। यही कारण है कि प्राचीन काल से आज तक भारतीय वाङ्मय में कथाओं की प्रधानता रही है एवं संवाद शैली के प्रयोग से उसे भावों का कुशल संवाहक बनाने का प्रयत्न हुआ है। यदि कथाएँ गेय-शैली में हों तो उनका मानव-मन पर प्रभाव गहरा अंकित हो जाता है। गेय काव्य में संक्षिप्तता व लाक्षणिकता के साथ-साथ लय की प्रधानता रहती है जो पाठक व श्रोता के मन को झंकृत करते हुए उसे रागात्मक अनुभूति प्रदान करता है। काव्य में शब्द नहीं अनुभव देखे जाते हैं एवं उन अनुभवों के पीछे जब एक जीवन्त व्यक्तित्व रहता है जो अपनी सम्पूर्ण चेतना से उस कथा-काव्य को रसमय बनाता है तो यह कथानक मानव का कंठहार होता है एवं समाज की अपूर्व निधि बन जाता है। प्रस्तुत सोहन काव्य कथा मंजरी का चतुर्थ भाग भी इसी की एक कड़ी है—इसमें जीवन्त व्यक्तित्व की सजग चेतना उँडेली हुई है।

जिन शासन के भास्कर, सम्यकज्ञान-दर्शन-चरित्र से समुन्नत, स्वाध्याय-शिरोमणि, आशुकवि, मरुधर छवि, पूज्य प्रवर्तक गुरुवर्य श्री सोहनलालजी म. सा. प्रातः स्मरणीय, महास्थविर, पूज्य गुरुदेव श्री पन्नालालजी म. सा. की मोक्षपथगामी परम्परा का निर्वाह करते हुए जहाँ तप और त्याग के नव-नवोन्मेषशालिनी प्रतिभा द्वारा साहित्य के भंडार में अभिवृद्धि भी कर रहे हैं। सोहन-काव्य-कथा मंजरी के प्रकाश्यमान भाग सरस्वती को समर्पित माला की ही अनुपम मणियाँ हैं।

कहानी कहना भी एक कला है। भावों का सही सम्प्रेषण, संवेदनाओं की अनुभूति एवं चेतना का स्फुरण यदि उससे नहीं हो पाता है तो श्रोता कथाकार का तादात्मीकरण संभव नहीं। पूज्य गुरुदेव का कथा कहने का ढंग इतना मोहक, सरल, रोचक व

काव्यात्मक होता है कि श्रोता भाव-विभोर होकर आत्म-विस्मृत-सा हो जाता है। श्रोतागण अत्यधिक तन्मय होकर आपके मुखारविन्द से कथाएँ सुनते हुए जब हुंकारा भरते हैं तो ऐसा प्रतीत होता है जैसे उत्साह का सागर उमड़ पड़ा हो।

प्रस्तुत काव्य-कथा संग्रह में कवि ने अतीत से प्रेरणा लेकर वर्तमान को सुन्दर बनाने का उत्साह प्रदान किया है। उन्होंने पृथ्वी से आकाश तक के जीवन को देखा है एवं उसके प्रति करुणासिक्त हृदय से उमड़ी आर्द्रता ने प्रत्येक पाठक व श्रोता को भिगोया है। काव्य आत्मा का संगीत है—उस आत्मा का, जो प्रेम और सद्भावना से लबालब भरी हो। पूज्य गुरुदेव भी जब 'मुकाम पोस्ट आकाश' में बालक की परमात्मा के नाम लिखी चिट्ठी पढ़कर सुनाते हैं तो पाषाण हृदय भी पिघले बिना नहीं रहता एव

'साधर्मी वात्सल्य भाव से श्री पाने का सार'

लेकर अपने को धन्य अनुभव करता है। उनकी करुणा मानव तक ही सीमित नहीं रही है अपितु समस्त पशुजगत् एवं प्राणिजगत् भी उनके कारुण्य से उपकृत हुआ है।

'अपने दुःख सम समझो पर के उसका जानो सफल जिया' का उद्बोधन सुनकर प्रत्येक सहृदय प्राणी नर जन्म को सफल बनाने का सन्देश ग्रहण करता है।

पूज्य गुरुवर्य के प्रत्येक कथानक का स्वर यद्यपि अध्यात्म-प्रधान है किन्तु वहाँ सिद्धान्तों की उपेक्षा नहीं है। सिद्धान्तों की रूक्षता को कथाओं की कमनीयता में लपेटकर कवि ने परोसा है ताकि उनकी दुरुहता सुपाच्य बन सके। जयन्ती बाई द्वारा प्रभु महावीर से तथा पिंगलक श्रावक द्वारा खंधक संन्यासी से पूछे गए प्रश्न ज्ञानवर्द्धक तो हैं ही संयम की प्रेरणा देने वाले भी हैं। जटिल प्रश्नों के उत्तर कवि ने सरल भाषा में शास्त्रीय प्रमाणों के साथ दिए हैं। जयन्ती बाई के प्रश्न अपूर्व तर्क शैली के द्योतक हैं जिनका समाधान उचित तर्कों से ही प्रभु ने किया है। सभी भव-सिद्धिक जीवों के मोक्ष में जाने से संसार खाली हो जायेगा तो जयन्ती बाई की इस शंका का उत्तर प्रभु ने—

आकाश श्रेणी अनादि अनंत है, परमाणु हेतु दरसाय।
अनन्त सर्पिणी उत्सर्पिणी निकले श्रेणी नहीं घट पाय जी।।

गुरुदेव की कथाओं में जप-तप आदि वाह्य क्रियाओं का आडंवर नहीं है। उनका ध्यान सदैव मनुष्य के हृदय-परिवर्तन की ओर रहा है। इसीलिए तो कभी प्रमाद नहीं करने के लिए कहते हैं तो कहीं प्रसन्न रहने के लिए फूट को दिल से हटाने का सन्देश देते हैं। सच्चे सुख की प्राप्ति तृष्णा के त्याग में है—न कि भोग में। कवि ने अर्थ को अनर्थ रूप में देखा है क्योंकि द्रव्य से सुख नहीं मिलता है। अत: जव—

'आत्मिक सुख पाया विना, सभी द्रव्य निष्काम।'

के स्वर कर्णगोचर होते हैं तो श्रद्धालु भक्त शाश्वत सत्य को आचरित कर उसे मूर्तरूप देने के लिए उद्यत हो उठता है।

पूज्य गुरुवर्य ने अपने कथानकों में लोक हृदय की अच्छी परख की है। उनकी सूझ गहरी है एवं निरीक्षक दृष्टि पैनी है इसलिए समाज के गुह्यतम प्रदेशों तक पहुंची है। नारी-स्वभाव की विचित्रताओं को भी अपने काव्य का विषय बनाया एवं अनेक प्रकार के उपदेशों से उसका परिमार्जन किया है। चार नारियाँ एकत्रित होकर अपनी घर-गृहस्थी की ही वातें करती हैं, उस वक्त वे धर्म साधना भी भूल जाती है। 'वेटा मेरा नमक है, वहूजी मिर्ची लाल' में गुरुवर्य ने वर्तमान नारी समाज की तथा कथित आधुनिकता पर गहरा व्यंग्य किया है। व्यंग्य स्वभाव-संशोधन के लिए होता है, उसमें व्यक्ति व समाज की विद्रूपताओं पर तीखा कटाक्ष होता है। यह तथ्य इस कथा में विशेष उभरा है एवं सरल व सादा व प्रेममय जीवन जीने की प्रेरणा मिलती है। 'भ्रष्टाचार-ले डूवा परिवार' में भी तीखा व्यंग्य है। रिश्वतखोर, भ्रष्टाचारी ओवरसियर द्वारा निर्मित, नदी के पुल के टूट जाने पर सभी यात्री वह जाते हैं जिसमें उसके वच्चे भी हैं। यह दिल दहला देनेवाली घटना उसे पागल वना देती है, एवं—'अतः पाप से डरो मित्रवर। नरभव सफल वनाना है।' की अमर सीख दे जाता है। इस प्रकार के अनेक प्रसंग कवि ने अपनी प्रतिभा से चयनित किए हैं।

एक वात विशेष है—वह है कवि के मन में नारी जाति की धर्मधुरंता पर पूर्ण विश्वास। कुमार्ग पर जाते हुए पुरुष को अनेक अवसरों पर नारी ने ही वचाया है। धर्म-साधना के मार्ग पर चलने के

लिए नारी ही पुरुष को प्रेरित करती है। अनेक कथाओं में कवि का स्वर मुखरित हुआ है।

गुरुदेव की सभी कथाओं का उद्देश्य उपदेशात्मक रहा है अतः वे किसी न किसी सन्देश की वाहिका हैं। छोटी-छोटी कथाओं के माध्यम से गुरुवर्य ने मर्म का स्पर्श करने वाले संदेश दिए हैं। जीवन में जिस उद्देश्य की वे प्रधानता चाहते हैं उससे संबंधित दो-दो व तीन-तीन कथाएं भी दी है। तृष्णा को दसवीं व चौदहवीं कथा में बुरी बला बताया है तो सत्संग की महिमा पन्द्रहवीं व तीसवीं कथा में हैं। समग्रतः मानव के लिए उसका जीवन उसकी बहुत बड़ी पूंजी है जिसकी सावधानी पूर्वक सुरक्षा के लिए उन्होंने प्रत्येक कथा में उद्बोधन दिया है। कर्म-गति पर दृढ़ आस्था हर कथा में है।

मयूर-पंखों की मोहनी छवि के समान कथाओं की विविधता चित्त को विश्राम देती है, वहीं हित-शिक्षाएँ जीवन सुधार के लिए प्रेरणा भी करती है। इन शिक्षाओं को गुरुदेव ने विविध अलंकारों से सजाकर भी प्रस्तुत किया है। 'धम्म-सारहीण' कथा में सुन्दर रूपक है। यौवन वय अटवी है एवं कमिनियां उसमें वाटिकाएं हैं। यदि उनमें उलझ गए तो अरिहन्त रूप सार्थवाह भी हमारे उद्धारक नहीं हो सकते। जीव रूपी कठियारा भी चन्दनसम आयु को जला-कर रत्नों की हंडिया के समान नरभव को हार रहा है। कितना सुन्दर सांग रूपक है। यत्र-तत्र उपमाओं व रूपकों के नवीन उपमान कथाओं को और भी आकर्षक बना देते हैं। 'कलचर भोगों में मत उलझो' कहकर कवि ने सांसारिक भोगों को कृत्रिम मोती की उपमा देकर उनकी निरर्थकता व मूल्यहीनता सहज ही प्रकट की है।

पूज्य गुरुदेव के सभी कथानकों की भाषा सहज, सुबोध व सरल तो है ही; साथ ही तत्सम शब्दावली का प्रयोग कर पौराणिक कथाओं में सोने में सुगंध लादी है। पूज्य गुरुदेव ने नुकीले वाक्यों में घनीभूत अनुभव को संक्षेप में सार रूप दे दिया है। 'विवेगे धम्मो' सदृश सूक्ति पर स्वतंत्र कथनक की रचना भी की है। आपके कई प्रयोग सुभाषित के रूप में भी प्रयुक्त होने लगे है।

'यों नंगा हो फिरै भटकता, जिसने वक्त न पहचाना।'
'भाग्य फलेगा उस नर का, जो सुकृत लाया जी।'

आदि में कितनी स्पष्टोक्ति है,—द्रष्टव्य है।

अन्य कथानकों की भांति प्रस्तुत संग्रह में भी राधेश्याम रामायण लावणी खड़ी, द्रोण, लावणी छोटी, कोरो कार्जालयो सदृश लोक तर्जों का उपयोग किया है वहीं 'नेमजी को जान वनी भारी, एवन्ता-मुनिवर नाव तिराई बहता नीर में, हो भवियण सरणा चार आदि जैन समाज में प्रचलित विशुद्ध भावपूर्ण तर्जों में भी रचनाएँ की हैं। इन लोकप्रिय धुनों में गेयकाव्य को इतनी कुशलता से बाँधा है कि पाठक व श्रोतागण भी उनके साथ ही भावविभोर होकर गा उठता है।

कथाओं को रोचक व सर्वजन भोग्य बनाने के लिए कथाकार ने यत्र तत्र अति मानुषिक या अति भौतिक घटनाओं का भी संयोजन किया है। इन अतिप्रकृति घटनाओं से संबंधित देवजाति के प्राणि वस्तुत: किसी न किसी अन्त: शक्ति के द्योतक बनकर आए हैं। इस प्रकार कवि ने कथा को मात्र चमत्कार प्रधान स्वरूप न देकर अन्त: प्रकृतियों के उद्‌घाटन में सहयोगी बनाया है।

वस्तुत: यह संग्रह बोधप्रद कथाओं का संग्रह है जिनसे साधनामय जीवन जीने में सहायता मिलती है। कविवर की वाणी हमें सदाचार की ओर उन्मुख करेगी एवं हम उपकारी, साहसी, दयालु, दृढ़ निश्चयी व सभ्य रखने वाले बनकर इन कथाओं से प्रेरणा ग्रहण करेंगे।

गुलाबपुरा

रतन लाल जैन

एम०ए० (द्वय), सा० रत्न

दि. २८-२-६१

स० प्रधानाचार्य

श्री गांधी शिक्षण संस्थान, गुलाबपुरा

अनुक्रमणिका

—※—

१ | जयन्ती बाई के प्रश्नोत्तर

(तर्ज : एवन्ता मुनिवर नाव तिरायी)

धन सती जयन्ती, पृच्छा कर लीनी श्री महावीर से ।।टेर।।

सूत्र - भगवती, शतक बारहवाँ, उद्देश दूसरा जान ।
प्रश्नोत्तर कर निर्णय लीना, कीना काम महान जी ।।१।।

एक वक्त त्रय लोक शिरोमणि, भगवन वीर पधारे ।
कौशाम्बी में फैली बात यह, मुदित हुए जन सारे जी ।।२।।

नर नाथ उदायन को वनमाली, दीनी सूचना आय ।
मुकुट वर्जकर वस्त्राभूषण हर्ष मांही बक्षाय जी ।।३।।

राजा प्रजागण बड़े मोद से, जा रहे दर्शन ताँई ।
राज-मात श्री मृगावती संग, नणंद जयंती बाई जी ।।४।।

प्रमुदित हो प्रभु दर्शन वंदन कीना सकल समाज ।
परिषद भारी भरी देशना, देते हैं जिन राज जी ।।५।।

लख चौरासी जीव योनि में, भटक रहा है जीव ।
भव्य आतमा समझे कोई, दे मुक्ति की नींव जी ।।६।।

मोह कर्म बलवान जगत में, फँसा जीव उस मांय ।
धर्म साधना से वंचित रह, देता जन्म गमाय जी ।।७।।

सुन कर के उपदेश सभी जन, निज इच्छा अनुसार ।
करके त्याग पचखान सिधाये, वापिस निज आगार जी ।।८।।

बाई जयन्ती वंदन करके, करती है अरदास ।
हल्का भारी जीव कैसे हो, फरमावे गुण रास जी ।।९।।

पाप अठारह से भारी हो, छोड़े हल्का होय ।
संसार कर्म, भवभ्रमण आदि के प्रश्न किये लो जोय जी ।।१०।।

भवसिद्धि कहो अगर जीवतो स्वाभाविक या परिणाम ।
प्रभु फरमावे स्वाभाविक होते, नहीं होवे परिणाम जी ।।११।।

भवसिद्धिक सब जीव मोक्ष में, जायेंगे क्या नाथ ।
भव सिद्धिक सब मुक्ति गामी हैं, वीर कहे सच बात जी ॥१२॥

कहे बाई यों तब तो इनसे खाली होय संसार ।
नहीं अर्थ यह समर्थ बाई, प्रभु रहे उच्चार जी ॥१३॥

आकाश श्रेणी अनादि अनन्त है, परमाणु हेतु दरसाय ।
अनंत सर्पिणी उत्सर्पिणी निकले, श्रेणी नहीं घट पायजी ॥१४॥

जीव सुप्त या जागृत अच्छे, देवे प्रभु फरमाय ।
सोते अरु जागृत दोनों ही, अच्छे वीर दरसाय जी ॥१५॥

उत्तर सुनकर बाई मनमें, गहरा विस्मय लाई ।
दोनों ही कैसे हैं अच्छे, देवे नाथ समझाई जी ॥१६॥

प्रभु फरमावे सुनो बाई यहाँ, कोई अधर्मी जीव ।
जागृत हो तो अधर्म माँही, लगा रहे निश दीव जी ॥१७॥

अधर्म का उपदेश करे अरु, करे अधर्म का काम ।
प्राण भूत अरु जीव सत्व को बनता है दुख धाम जी ॥१८॥

क्रोध मान माया करके वह, निश दिन पाप कमावे ।
ऐसे व्यक्ति सोते अच्छे, वीर जिनन्द फरमावे जी ॥१९॥

धर्मी जीव तो जागृत अच्छे, स्वयं धर्म कमाय ।
धार्मिक वृत्ति करके अन्य को, धर्म मार्ग बतलाय जी ॥२०॥

प्राण भूत अरू जीव सत्व भी धर्मी से सुख पाय ।
धर्मी जीव सबको दे साता, प्रभु ऐसे दरसाय जी ॥२१॥

और अनेकों प्रश्न किये हैं देखो सूत्र के मांहीं ।
सती जयन्ती संयम लेकर, सुर गति ली अपनाई जी ॥२२॥

प्राज्ञ प्रसादे 'सोहन मुनि' कहे, करो सदा स्वाध्याय ।
सम्यग् ज्ञान मिलेगा इनसे, भव भ्रमण मिट जाय जी ॥२३॥

दो हज़ार गुण चाली पोस बुद, नवमी शुक्कर वार ।
लाल भवन जयपुर के मांहीं, जोड़ करी श्रेयकार जी ॥२४॥

—※—

२ | खन्धक सन्यासी जी का प्रबोध

(तर्ज-एवन्ता मुनिवर. नाव तिराई)

धन पिंगलक श्रावक, अनुपम ज्ञानी था श्री जिन धर्म का ।।टेर।।

सावत्थी नगरी में रहता गर्दभाली संन्यास।
खन्धक परिव्राजक था उनका, अन्ते वासी खास जी ।।१।।

ऋग्-यजु-साम अथर्वण चारों वेदों का था ज्ञान।
इतिहास निघंटु छह अंगों का, था वह पूर्ण विद्वान जी ।।२।।

सारक-वारक-धारक-पारक चारों मांहीं हुशियार।
(सारए)-भूले पाठ को याद करा कर, करता शिष्य तैय्यार जी ।।३।।

(वारए)-अशुद्ध बोलता शिष्य यदि कोई देता था शुद्ध ज्ञान।
(धारए)-पढ़े ज्ञान को रखे धार अरु दे औरों को ज्ञान जी ।।४।।

(पारए)-पारंगत था सब शास्त्रों में ख्याति लीनी पाय।
नहीं था इनका शानी कोई, अपने धर्म के मांय जी ।।५।।

एक वक्त श्री वीर प्रभु का, श्रावक पिंगलक नाम।
चलकर आया वहीं जहां था, खंधक जी का धाम जी ।।६।।

हे स्कन्दक ! मुझ प्रश्नों का दो उत्तर सद्य विचार।
लोक, जीव, अरू सिद्धशिला व सिद्ध प्रश्न ये चार जी ।।७।।

अन्त रहित वा अन्त सहित हैं, दो मुझ को समझाय।
किस मृत्यु से जन्म मरण को जीव घटाय बढ़ाय जी ।।८।।

इन पांचों प्रश्नों का उत्तर, पिंगलक रहा है पूंछ।
मान भंग के भाव नहीं है, प्रेम भाव है ऊँच जी ।।९।।

तीन वक्त सुन खंधक मन में, करने लगा विचार।
उत्तर कुछ भी नहिं आया तब, लीनी मौन को धार जी ।।१०।।

शंका दिल में गहरी आ गई, क्या कहूँ मैं इस बार।
अगर कहूं जो सच नहिं निकले, गलती हो दुखकार जी ।।११।।

गहराई से सोच रहा है, कैसे उत्तर आय।
उत्तर से संतोष न हो तो, कही बात भी जाय जी ।।१२।।

बुद्धि भेद हो गया वहाँ तब, मन में खिन्नता आई ।
इस विषय में कोरा हूँ मैं, ऐसे ग्लानी आई जी ॥१३॥

कुछ समय तक रुका वहाँ पर, खंधक बोल न पाया ।
नहीं मिला कुछ भी उत्तर तब पिंगल स्थान सिधाया जी ॥१४॥

अल्प समय के बाद वहाँ, सावत्थी नगरी मांहीं ।
तीन मार्ग चउ मार्ग मिले वहाँ, जन-जन रहे सुनायी जी ॥१५॥

कृतंगला नगरी के बाहर, छत्तपलास आराम ।
जगत शिरोमणी वीर पधारे, आनन्द के वर धाम जी ॥१६॥

लोग सभी वंदन को जा रहे एक दिशा के मांही ।
स्कन्दक जी के बात श्रवण कर ऐसे मन में आयी जी ॥१७॥

मैं भी जाकर प्रभू पास में, अपनी शंका टालूँ ।
यथार्थ उत्तर देंगे भगवन्, समाधान वहाँ पालूँ जी ॥१८॥

ऐसे सोच वह त्वरित वहाँ से, अपने स्थान पर आय ।
तापस संबंधी भंडोपकरण ले, चला उसी दिशि मांय जी ॥१९॥

उसी समय श्री वर्धमान जिन गौतम को दरसाय ।
आज तुम्हारा पूर्व संगति-अभी मिलेगा आय जी ॥२०॥

सुनकर गौतम अर्ज गुजारे, साथी कौन सा आवे ।
खंधक तापस यहाँ आ रहा, वीर जिनन्द फरमावे जी ॥२१॥

अर्ज करी प्रभु किस कारण से आज यहाँ वह आया ।
पिंगल के पाँचों प्रश्नों का उत्तर नहीं दे पाया जी ॥२२॥

शंका कांक्षा उत्पन्न हो गई उसके हृदय मांय ।
केई तरह से सोच चुका वह, निर्णय नहीं ले पाय जी ॥२३॥

उन प्रश्नों का उत्तर लेने आज यहाँ वह आय ।
गौतम स्वामी विनय पूर्वक, प्रभु को अर्ज सुनाय जी ॥२४॥

क्या वह खंधक दीक्षित होगा, प्रभु चरण में आय ।
हां गौतम ! वह दीक्षा लेगा ऐसे प्रभु दरसाय जी ॥२५॥

कितनी देर में आवेगा वह सुनिये दीन दयाल ।
हे गौतम ! आने व.ला है, अभी यहाँ तत्काल जी ॥२६॥

उसी समय गौतम स्वामी ने देखा खंधक आते।
आसन त्याग उसी क्षण गौतम उनके सन्मुख जाते जी ॥२७॥

स्वागत सुस्वागत है आपका गौतम यूं दरसाय।
आज आपका आना अच्छा, मेरे मन को भाय जी ॥२८॥

पिंगल नियंठ ने प्रश्न किये थे, पाँच तुम्हारे पास।
प्रभु समीप उत्तर लेने हित आये बात यह खास जी ॥२९॥

हे खंधक ! कहो बात सही है, हाँ गौतम ! सच बात।
इसीलिए मैं यहाँ पर आया, मिथ्या नहीं तिल मात जी ॥३०॥

अहो गौतम ! कहो ऐसा ज्ञानी, कौन पुरुष जग माँय।
मेरे मन की गुप्त बात को दीनी तुम्हें दरसाय जी ॥३१॥

जिससे छिपी हुई भी मन को लीनी तुमने जान।
हे खंधक ! मर्म धर्माचार्य, धर्म गुरु है महान जी ॥३२॥

त्रिकालज्ञाता सर्व दर्शी हैं, महावीर भगवान।
उनने मेरी गुप्त बात को लीनी ज्ञान से जान जी ॥३३॥

पूर्ण कृपा कर गुरुदेव ने मुझ को अभी सुनाई।
वही बात मैं अभी तुम्हारे सन्मुख आ दरसाई जी ॥३४॥

इसमें मेरा कुछ भी नहीं है जो प्रभु ने फरमाया।
यों बातें कर दोनों ही फिर, वीर पास में आया जी ॥३५॥

दर्शन करते ही खंधक का अन्तर मन हरसाया।
तीन वक्त कर वंदन प्रभु को, सेवा में दिल चाया जी ॥३६॥

प्रभु फरमावे खंदक ! मन को शंका टालने आये।
पिंगल नियंठ के पाँच प्रश्न के उत्तर नहीं तुम पाये जी ॥३७॥

सत्य वचन है प्रभु आपके इसीलिए मैं आया।
समाधान पालूं मैं प्रभु से, हो जावे मन चाया जी ॥३८॥

हे खंधक ! ये चार प्रकारे लोक विलोका जाय।
द्रव्य क्षेत्र अरू काल भाव से, इस को यों समझाय जी ॥३९॥

द्रव्य से ये लोक एक है अन्त सहित लो जान।
क्षेत्र से भी अन्त सहित योजन क्रोड़ाक्रोड़ी प्रमाण जी ॥४०॥

काल से ये नित्य शाश्वत, तीनों काल के माँय।
अक्षय अव्यय अवस्थित रहता, अन्त रहित कहलाय जी ॥४१॥

भाव से है अनन्त वर्ण रस गंध स्पर्श पर्याय।
अनन्त गुरु लघु अगुरु लघु भी, अन्त रहित फरमाय जी ॥४२॥

चार भेद ऐसे ही जीव के द्रव्य क्षेत्र काल भाव।
द्रव्य से जीव एक है वह अन्त सहित में आव जी ॥४३॥

क्षेत्र से असंख्य प्रदेशी आकाश अवगाहन सान्त।
काल से जीव नित्य शाश्वत, कभी नहीं हो अन्त जी ॥४४॥

भाव से है अनन्त ज्ञान दर्शन चरित्र पर्याय।
अनन्त अगुरु लघु पर्याय है, अन्त रहित कहलाय जी ॥४५॥

सिद्धि के भी चार भेद एक सिद्धि द्रव्य से सान्त।
लक्ष पैंताली योजन क्षेत्र से, उसका भी है अन्त जी ॥४६॥

काल थकी है नित्य सिद्धि वह अन्त रहित दरसाय।
लोक समान भाव से है यह, अन्त रहित कहलाय जी ॥४७॥

सिद्ध जीव के चार भेद, द्रव्य से एक है सान्त।
क्षेत्र से असंख्य प्रदेशी आकाश अवगाहे सान्त जी ॥४८॥

काल से है सिद्ध सादि अरु अन्त रहित लो मान।
भाव से अनन्त ज्ञान दर्शन व चारित्रादि पहचान जी ॥४९॥

भगवन् ! किस मरने से जीव का भव भ्रमण बढ़ जाय।
और कौनसा मरण कि जिससे, यह संसार घटाय जी ॥५०॥

हे खंधक ! मरने के भेद दो पंडित अरु है बाल।
बाल मरण के बारह भेद है उनका कहूँ सब हाल जी ॥५१॥

१ २ ३ ४
बलन वसट्ठ अरु अन्तोसल्ल व चौथा तद्भव जान।
५ ६ ७ ८ ९ १०
गिरि, तरु, जल, अग्नि, विष, शस्त्र, ये दस लेवो मान जी ॥५२॥

११ १२
वेहानस अरु गिद्धपिट्ठ ये बारह मरण बतलाय।
इन्हीं मरण से चारों गति का अनंत भव बढ़ जाय जी ॥५३॥

पंडित मरण के भेद कहे दो सुनलो देकर ध्यान ।
पादपोपगमन है पहला, दूजा भक्त प्रत्याख्यान जी ।।५४।।

इनके दो दो भेद कहे हैं, नीहारी, अनिहारी ।
संथारा कर मरे गाँव में उसको कहे निहारी जी ।।५५।।

अनिहारी तो वन में छोड़े देह वहीं रह जाय ।
दोनों मृत्यु से मरे उसी का पंडित मरण कहाय जी ।।५६।।

पंडित मरण मरने वाले के, भव अनन्त क्षय थाय ।
वही आतमा जन्म मरण के देवे चक्र मिटाय जी ।।५७।।

नाथ त्रिलोकी से सुन कीनी खंधक ने अरदास ।
संयम लेकर तारुँ आतमा यह इच्छा है खास जी ।।५८।।

अहासुहं सुन प्रभु पास में लीनी दीक्षा धार ।
संयम मांही रमण करे मुनि नहीं प्रमाद लिगार जी ।।५९।।

प्रभु पास से आज्ञा लेकर भिक्षु प्रतिमा धार ।
शुद्ध भाव से बारह प्रतिमा दीनी पार उतार जी ।।६०।।

गुण संवत्सर आदि तपस्या कीनी अनेक प्रकार ।
तपकर जीवन शुद्ध बनाया धन खंदक अणगार जी ।।६१।।

एक मास का कर संथारा, अंत समय मुनिराज ।
नश्वर देह को त्याग पधारे, स्वर्ग बारवें मांझ जी ।।६२।।

वहाँ से च्यव कर महा विदेह में, पावेंगे शिव स्थान ।
सभी कर्म का क्षय करके फिर, होंगे सिद्ध भगवान जी ।।६३।।

सूत्र भगवती शतक दूसरा प्रथम उद्देशा मांय ।
खंधक जी का संबंध पढ़ कर लीनी गीति बनाय जी ।।६४।।

रचना में यदि ज्यादा कमती हो गया हो कहीं भाव ।
अरिहंत साक्षी से मिथ्या दुष्कृत देता हूँ धर चाव जी ।।६५।।

प्राज्ञ प्रसादे 'सोहन मुनि' कहे श्रावक हो गुणवान ।
तभी धर्म की जय जय होवे, बढ़े सदा ही शान जी ।६६।।

दो हजार उन्चाली चौमासा, जयपुर शहर के मांय ।
श्रावक श्राविका खूब धर्म का दीना ठाठ लगाय जी ।।६७।।

पूज्य प्रवर्तक कुन्दन सोहन बाल रु वल्लभ चंद ।
पांच संत और साध्वी रत्नत्रयी, रहे सुख कन्द जी ।।६८।।

—✻—

३ | पहर राज्य

तर्ज—राधेश्याम रामायण

दोहा:—लोकालोक के भाव सब, जाने देखे ईश।
उन्हीं वीर जिनन्द का-जाप जपो निश दीश ॥१॥

मानव तन पर यह कथा-सुनो भविक चितलाय।
पहर राज सम भव मिला-व्यर्थ इसे न गँवाय ॥२॥

कर्णपुरी नगरी का राजा कर्णसिंह था जग विख्यात।
न्याय नीति का पूरा पालक, दीन दुखी की पूछे बात ॥१॥

पुत्र एक था सज्जनसिंह वह बालक वय में अति हुशियार।
जाता था शाला में नित ही पढ़े चित्त से धर कर प्यार ॥२॥

उसी शहर में सेठ पुत्र दो नाम जिन्हों का सुरेश-महेश।
हुई कंवर से पूर्ण प्रीति वे तीनों साथ में रहे हमेश ॥३॥

दो चार वर्ष पश्चात एक दिन सेठ पुत्र यों करे विचार।
बना रहेगा कब तक हम से राजपुत्र का ऐसा प्यार ॥४॥

आखिर में वह राज गादी पा देगा हमको सद्य बिसार।
अत: परीक्षा करलें इसकी इसके दिल में कितना प्यार ॥५॥

दोनों कँवर यों राज कँवर से रहने लगे सदा मुंह मोड़।
राज कंवर यह देख व्यवस्था कहे कहाँ जाते हो छोड़ ॥६॥

सेठ कंवर बोले यों कब तक प्रेम रहेगा तुमरे संग।
चन्द समय पश्चात् आपका बन जावेगा और ही ढंग ॥७॥

क्योंकि आप तो होंगे भूप हम प्रजा रूप कहलायेगें।
अत: समय आते ही आप हम अलग-अलग हो जायेगें ॥८॥

राज कंवर कहे सुनलो मित्रों! प्रेम कभी नहीं घट सकता।
अगर मिलेगी राज गद्दी तो सीर तुम्हारा हो सकता ॥९॥

दोनों बोले राज मिले तब पहर राज हमको देना।
यह पट्टा तुम लिख दो हमको जो चाहे तब ले लेना ॥१०॥

कंवर प्रेम से दो पट्टे लिख दोनों के कर में दीने ।
बड़े प्रेम से दोनों ने भी पट्टे कर में ले लीने ॥११॥

राज कंवर भी पढ़ लिख करके राज भवन में चल आया ।
मात-पिता लख योग्य कंवर को दिल में अति आनन्द पाया ॥१२॥

सोचे अब संसार त्याग कर जीवन का उद्धार करें ।
राज्याभिषेक कर राज कंवर का सकल मनोरथ पूर्ण करें ॥१३॥

उस समय वहाँ पर धर्म घोष मुनि ग्राम नगर विचरत आये ।
सुन वाणी हर्षित हो भूपति गुरु चरण में लग जाये ॥१४॥

राज-काज संभला के भूप ने ले दीक्षा कीना कल्याण ।
राज कंवर ले राज्य भार को रखता सदा प्रजा का ध्यान ॥१५॥

एक समय निज कर्मोदय से सुरेश पर संकट आया ।
व्यापार बीच सब धन खोया और लाखों का भी ऋण छाया ॥१६॥

ऋण दाता सब नित दुकान पर कर्ज मांगने आते हैं ।
कई तरह के शब्द सुना कर दे दो रकम कह जाते हैं ॥१७॥

चारों तरफ से हताश होकर सुरेश मन में करे विचार ।
क्यों न भूपति पास पहुंच कर ले लूं निज पट्टे का सार ॥१८॥

ऋण दाता से सुरेश कहता राज तख्त जब ले लेऊँ ।
सुनकर आप सभी चल आना ब्याज सहित मैं दे देऊँ ॥१९॥

भूप पास आ सुरेश बोला नाथ ! अरज ये सुन लेना ।
एक पहर का राज्य सोंप निज प्रण का पालन कर लेना ॥२०॥

उसी समय कर भूप व्यवस्था पहर राज संभला दीना ।
उद्घोषण कर सारे शहर में, पूरा अधिकारी कीना ॥२१॥

मंत्री गण आ कहे आपका महोत्सव मंडप रचवावें ।
खाओ पीओ मौज करो यह अवसर वापिस नहिं आवे ॥२२॥

कहे सुरेश यों महोत्सव करके मुझे न समय गवाँना है ।
मैं तो अपना काम बनाऊँ समय न वापिस आना है ॥२३॥

उसी समय सब कर्जदार को कर्जा देकर साफ किया ।
महर्घ कीमती ले रतनों को निज मकान पर भेज दिया ॥२४॥

एक पहर में दान पुण्य कर मिले वक्त से लाभ लिया।
राज त्याग जब निकला बाहर लोकों ने सम्मान किया ।।२५।।

उधर एकदा महेश मित्र भी जब कर्जे से घबराया।
लेकर पट्टा आया राज में पहर राज सत्वर पाया ।।२६।।

मंत्रीगण ने जाल विछा कर उसे फांस में डाल दिया।
महोत्सव हेतु नाच गान का महेश ने आदेश किया ।।२७।।

मंजन मर्दन स्नान कराकर वस्त्राभूषण सजवाया।
खाने-पीने में उसने अनमोल वक्त को बीताया ।।२८।।

हुआ पहर आ कहे सन्तरी चलो! यहाँ से रस्ता लो!!
उठो! स्थान से बाहर निकलो! कहें वचन को संभालो ।।२९।।

देकर धक्का बाहर कीना कर्जदार ने आ पकड़ा।
कहाँ जाते हो! ठहरो! यहाँ पर बंधन में सत्वर जकड़ा ।।३०।।

कोई पैर की मार रहा है, कोई धक्का देता है।
कोई थप्पड़ मार पास के खींच वस्त्र को लेता है ।।३१।।

यों नंगा हो फिरे भटकता जिसने वक्त न पहचाना।
मौज मजे में खोया उसको भव-भव में होगा रोना ।।३२।।

मनुष्य जन्म है पहर राज सम धर्म खजाना भर लेना।
पर भव में सुख मिले अनन्ता कर्ज रहे ना शिर देना ।।३३।।

सुन करके वृतान्त हृदय में, अच्छी तरह जमा लेना।
प्रमाद किया तो महेश सम ही होगा अन्त में पछताना ।।३४।।

'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन मुनि' कहे जीवन सफल बना जाना।
जन्म मरण मिट जाय जगत से जल्दी मुक्ति को पाना ।।३५।।

—*—

४ | मानव देह

तर्ज— लावणीखडी :—

अवसर चूक गया तो भाई ! फिर मौका नहीं आवेगा ।
करे अनेक उपाय तथापि मानव देह नहीं पावेगा ।।टेर।।

एक गांव में मूलदेव था घर में साधन की खामी ।
कहीं जाय मैं भूख मिटाऊँ छोड़ गांव को कुछ पामी ।।
सूर्य अस्त के समय वृक्ष तल रात रहा दिल सुख मानी ।
वहाँ बैठा था एक भिखारी बात करी है मन जानी ।।
सोते समय कहे आपस में कल दिन कौन खिलावेगा ।।करे।।१।।

मध्य निशा में दोनों को ही स्वप्न चन्द्र का आया है ।
मानों गगन से उतर निशाकर सीधा मुख में आया है ।
जाग भिखारी कहे सुनों तुम, स्वप्न चन्द्र का पाया है ।
मूलदेव कहे गुप्त रखो यह कहने का नहीं भाया है ।
कहे भिखारी सभी सामने कोई अर्थ बतायेगा ।।करे।।२।।

एक पुरुष कहे अच्छा स्वप्न हैं इसका फल तू यह पासी ।
गोल चन्द्र सम मोटा रोटा, साथे घृत गुड़ मिल जासी ।
सुन कर के खुश हुआ हृदय में आज रोटला मिल जासी ।
आगे चला, मिला इक मानव पूछा ऐसे क्या [1]खासी ।
कहे मुआफिक दिया रोट गुड़ और तुम्हें क्या चाहेगा ।।करे।।३।।

बड़े मोद में खाकर उसको करे भिखारी हृदय विचार ।
स्वप्न सफल हो गया है मेरा मिला मुझे जीवन का सार ।
उठा सवेरे मूलदेव बिन बोले आया जोशी द्वार ।
कही हकीकत सभी स्वप्न की सुनी नजूमी करे विचार ।
चन्द्र स्वप्न से दिवस सातवें नगर भूप यह होवेगा ।।करे।।४।।

अतः मेरा सब संकट काटूं सुता व्याह दूं इनको लार ।
बैठी महल में मौज करेगो मिट जावे मेरा जंजाल ।

---

[1]खायेगा ।

कहे नजुमी सुनो प्रथम यह बात मेरी कर लो स्वीकार ।
फिर मैं आपको सभी स्वप्न का कह दूँगा होगा जो सार ।
मूल कहे मंजूर करूँगा करने लायक होवेगा ।।करे।।५।।

मेरी कन्या बहुत विचक्षण रति सुन्दर है रति उणिहार ।
उनके संग विवाह करो तुम मेरे दिल में यही विचार ।
बात करी स्वीकार त्वरित ही विवाह विधि कीनी तैयार ।
मूलदेव कर पाणिग्रहण को, रहे वहीं पर भवन मँझार ।
कहे विप्र यह स्वप्न एक सप्ताह में राज दिलावेगा ।।करे।।६।।

कर्म योग से सुन्दर भूप का दिवस सातवें हुआ अवसान ।
लोग सभी यो दिल में सोचे नहीं भूप के कोई संतान ।
किसको गादी पर बैठावें जिससे रहे यहाँ की शान ।
अपना हक बतलाकर लड़ते सभी बात को रहे न मान ।
सचिव कहे मानेंगें जिसको हाथी भूप बनावेगा ।।करे।।७।।

सब के दिल में बात जमी तब पट हस्ति सिणगार दिया ।
रखो सूंड पर पुष्पमाल और गज को यह आदेश किया ।
जिसको यह माला पहनावे वही भूप कहलावेगा ।
सबको यह स्वीकार बात है कोई विरूद्ध न जावेगा ।
जन जन के मन खुशियाँ छाई अपना नम्बर आवेगा ।।करे।।८।।

चला सभी को त्याग हस्तिवर सीधा बाग में आया है ।
मूलदेव को जगा गले में पुष्पमाल पहनाया है ।
जय-जयकार करे नर-नारी बड़े ठाठ से लाया है ।
अभिषेक कर मूलदेव को राज्य भार संभलाया है ।
मृतक भूप को जला मूल नृप अपना राज्य चलावेगा ।।करे।।९।।

चन्द समय में राज व्यवस्था अपने कर में ले लीनी ।
सभी प्रजा गण रहे मौज में वह नीति कायम कीनी ।
खूब प्रशंसा फैली जग में सबने मुख से जय कीनी ।
कहे सभी यह चन्द्र स्वप्न से ऐसी संपति पा लीनी ।
सुन कर ऐसी बात भिखारी मन में ध्यान लगावेगा ।।करे ।।१०।।

चन्द्र स्वप्न से राज ऋद्धि सुख उसने तो गहरा पाया।
मुझको भी यह आया किन्तु रोटा गुड़ में ही खोया।
अब भी ऐसा स्वप्न लेऊँ मैं राज्य सम्पदा मिल जावे।
किया बहुत उपाय तथापि स्वप्न चन्द्र का नहीं आवे।
पश्चात्ताप करे अब दिल में चन्द्र स्वप्न कब आवेगा ।।करे।।११।।

वापिस आना बहुत कठिन है किन्तु कभी वह आ जावे।
पर तुम समझो प्यारे मित्रों! वापस नर भव नहीं पावे।
इस आत्मा को चन्द्र स्वप्न वत मानव तन यहाँ मिल जावे।
सावधान रह करे साधना; शिवपुर राजा कहलावे।
नहीं तो भिक्षुक के सम समझो आखिर में पछतावेगा ।।करे।।११।।

गुड़ रोटा सम विषय सुखों में मानव तन पूरा कीना।
फिर पछताए क्या होता है समय हाथ से खो दीना।
'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन मुनि' कहे धन्य उन्हों का है जीना।
भोग त्याग कर योग धर्म में जिसने अपना चित दीना।
दो हजार तेवीस चोमासा शहर मसूदा भावेगा ।।करे।।१३।।

—*—

५ | पुण्य अखुट धन पाय

दोहा :—कल्पवेल चिंतामणि, मन वांछित दातार।
नाम अधिक महावीर का, भव दुख भंजन हार।

(तर्ज :—यह प्रजन कंवर की प्रकट सुनो पुण्याई महाराज)

करो पुण्य का काम मनुष्य भव पाया-महाराज-अखुट सुख मिले-
सवाया जी। सुकृत लाया संग वही मन चाहा पाया जी ।।टेर।।
एक शहर वीरपुर वीर सेन महाराया-
महाराज-राज्यनीती के ज्ञाता जी।
पाले अखंडित राज्य प्रजा जन को सुख दाता जी।
राज कंवर गुणवान यशोधर नामी-
महाराज-मित्र हैं तीन पियारा जी।
मंत्री सार्थवाह सेठ पुत्र में प्रेम अपारा जी।
एक दिन चारों ही मित्र बाग में आये-
महाराज बैठ गये तरु की छाया जी ।।सु.।।१।।
राज कँवर कहे सुनों मित्र! मुझ दिल की-
महाराज-जगत में जो जन आया जी।
ना करी परीक्षा भाग्य तणी क्या नर तन पाया जी।
अतः यहाँ से चले दिसावर माँही-
महाराज-नहीं कौड़ी संग लेवें जी।
सुख दुख देखें भाग्य कहाँ तक अपना देवे जी।
यों विचार कर चले चार ही सँग में-
महाराज-पोतनपुर में चल आया जी ।।सु.।।२।।
ठहरे बाग में सुन्दर आश्रय पाकर-
महाराज-भोजन को बेला आई जी।
उस समय मंत्री सुत बचन कहे सबको सुखदाई जी।
यहाँ भोजन बोलो आज कौन करवावें-
महाराज-सार्थवाह सुत फरमावेजो।

है मेरी आज की वारी ऐसी साफ सुनावे जी ।
यों कहकर आया पोतनपुर के माँही-
महाराज-शहर लख दिल हरसाया जी ।।सु.।।३।।
वहाँ शहर में धूम मची महोत्सव की-
महाराज-सभी जन रंग विरंगे जी ।
वस्त्र पहन वाजार माँय घूमें चित चंगेजी ।
एक हाट पर क्रय-विक्रय था भारी-
महाराज-तोलता शाह घवराया जी ।
यह देख सार्थवाह पुत्र सभी को झट निपटाया जी ।
सेठ निपुणता देख अरज यों करता-
महाराज-समय भोजन का आया जी ।।सु.।।४।।
सार्थवाह सुत बोला ऐसे वाणी-
महाराज-सेठ-मेरी सुन लेना जी ।
तीन मित्र हैं और उन्हें सूचित कर देना जी ।
सप्रेम वुला चारों को खूव जिमाया-
महाराज-वाद ताम्वूल खिलाया जी ।
पाँच-पाँच दीनार भेंट में दे हर्षाया जी ।
सहर्ष विदा हो वाग मांय चल आये-
महाराज-मोज से समय विताया जी ।।सु.।।५।।
दूजे दिन कहे सेठ पुत्र सुन लेना—
महाराज-आज मुझ भोजन वारी जी ।
मैं जाऊँ नगर के मांय करूँ सव ही तैयारी जी ।
यों कहकर के चल गणिकालय में आया-
महाराज-वैश्या पुत्री ललचाई जी ।
रूप अनुपम देख हृदय में खुशी मनाई जी ।
अनिमेष दृष्टि से गणिका पुत्री देखे-
महाराज-चित्त गणिका हरसाया जी ।।सु.।।६।।
जो कभी न लखती किसी पुरुष के आगे-
महाराज-सदा एकान्ते रहती जी ।
मेरी वात नहीं सुनती नहीं कुछ मुख से कहती जी ।

अतः जिमाकर इनको यहां पर राखूं-
महाराज-जिसे खुश होवे बाई जी।
फले मनोरथ माल कामना हो मन चाई जी।
नी भोजन मनुहार मित्र बुलवाके-
महाराज-रुचि से खूब जिमाया जी ॥सु.॥७॥
सौ सौ अशर्फी भेंट मांही दे दीनी-
महाराज-खुशी हो वापिस आया जी।
दूजे दिन मंत्री सुत ने ऐसे शब्द सुनाया जी।
आज करी मनुहार भोजन जीमाऊं-
महाराज-नहीं न्यायालय आया जी।
कोई नर-नारी न्याय करावन यहां पर आया जी।
उनमें से दो नार हाकिम से बोली-
महाराज-न्याय कीजे मन भाया जी ॥सु.॥८॥
हम दोनों हीके एक पुरुष की नारी-
महाराज-पति चल स्वर्ग सिधाया जी।
मरते दम जो कही बात सुनलो महाराया जी।
जिसकी हो संतान अर्थ भी उसका-
महाराज-नहीं कुछ और सुनाना जी।
यों मुख से कहकर हुए आप परलोक रवाना जी।
अब मैं कहती हूँ यह लड़का है मेरा-
महाराज-शोक अपना बतलाया जी ॥सु.॥९॥
न्यायाधीश सुन अति विस्मय हो बोले-
महाराज-न्याय यह कैसे कीजे जी।
किसका सुत है ? मात कौन ? निर्णय किम दीजे जी।
शून्य सभा लख मंत्री सुत यों बोला-
महाराज-न्याय यह मुझ से लीजे जी।
हाकिम दीना हुक्म आप निर्णय कर दीजे जी।
मंत्री पुत्री दोनों को पास बुलावे-
महाराज-साफ आदेश सुनाया जो ॥सु.॥१०॥

लड़के को रक्खा सभा बीच में लाकर-
महाराज-बाद में भृत्य बुलाया जो।
सुथार के घर भेज तेज आरा मंगवाया जी।
लेटा बाल को ऊपर आरा रक्खा-
महाराज-करूँ निर्णय सून लीजेजी।
अब देऊँ बराबर बाँट शोक मन में नहीं कीजे जी।
यह देख दृश्य असली माँ उठकर बोली-
महाराज-सभी मैंने भरपाया जो ।।सु.।।११।।
जिन्दा रहे यह लाल नहीं कुछ चाहूँ-
महाराज-आप इनको दे दीजे जी।
सन्तान सम्पति सभी इसे देकर यश लीजे जी।
मैं कर मजदूरी निज पोषण कर लूँगी-
महाराज-रहूँ कुटिया के माँही जी।
फटे पुराने पहनूँ वस्त्र कुछ चिन्ता नाँही जी।
यदि पड़े माँगनी घर-घर भिक्षा जाकर-
महाराज-पुत्र मुख देख भुलाया जी ।।सु.।।१२।।
दूजी नारी मुख से नहीं कुछ बोले-
महाराज-चित में हो रही राजी जी।
आधा धन तो लगे हाथ यह बात है ताजी जी।
मंत्री सुत ने पूछा तू क्या चाहती-
महाराज-उत्तर में ऐसे बोली जी।
आप करो सो ठीक मंत्री सुत दिल में तोली जी।
उसमें है मातृत्व भाव, यह झूठी-
महाराज-पुत्र है उसका जाया जी ।।सु.१३।।
सभाध्यक्ष के सम्मुख ऐसे बोला-
महाराज-पुत्र है उसका जाया जो
यह मिथ्या कहती बात सभी इन जाल रचाया जी।
संतान सम्पति सदन सभी संभलाया-
महाराज-खुशी कर घर पहुंचायी जो।

असत्य भाषी सोक नार को बाहर कढ़ायी जी ।
निर्णय सच्चा देख धन्य सब कहते-
महाराज-हाकिम दिल में हरषाया जी ।।सु.।।१४

अत्याग्रह से हाकिम बोला वाणी-
महाराज-हमें कृतारथ कीजे जी ।
भोजन की मनुहार मान मंजूरी दीजे जी ।
मंत्री सुत कहे तीन मित्र है मेरे-
महाराज-उन्हें पहले जीमाऊँ जी ।
यह है मेरा नियम बाद में भोजन खाऊं जी ।
उसी समय स्वागत कर मित्र बुलाये-
महाराज-विविध मिष्ठान्न खिलाया जी ।।सु.।।१५।।

खूब करी सत्कार आसन बैठाया-
महाराज-बाद में इत्र लगाया जी ।
सहस्र-सहस्र दीनार देय वापिस पहुँचाया जी ।
चोथे दिन कहे राजपुत्र, सुनो मित्रों !
महाराज-आज भोजन करवाऊँ जी ।
अभी शहर में जाकर के प्रवन्ध बनाऊँ जी ।
यों कहकर के वह चला होय चित्त चंगे-
महाराज-कँवर का पुण्य सवाया जी ।।सु.।।१६।।

उस समय काल के गाल समाया राजा-
महाराज-नहीं संतान है कोई जी ।
अतः राज गद्दी की लिप्सा सबको होई जी ।
अपना-2 हक बतला कर लड़ते-
महाराज-परस्पर युद्ध मचावे जी ।
सचिव देख सब दृश्य वहाँ सबको समझावेजी ।
स्वारथ के वश होकर क्यों तुम मरते-
महाराज-संग नहीं जावे माया जी ।।सु.।।१७।।

दन्ति सूंड पर रखो पुष्प की माला-
महाराज-जिसे वह जा पहनावे जी ।
उसे बनावें भूप यही मेरे मन भावे जी ।

सब के ही हित में बात जमी है अच्छी-
महाराज-दिया गज को सिणगारी जी।
सज-धज के तैयार होय आवे नर नारी जी।
वड़े-2 उमराव मूँछ को तानें-
महाराज-हृदय में हर्ष भराया जी ।।सु.।।१८।।

आशा भारी भरी सभी के दिल में-
महाराज-हार हम गले में आवे जी।
किन्तु भाग्य विन छोड़ दन्ति आगे बढ़ जावे जी।
सीधा हाथी राजकँवर पे आया-
महाराज-गले में माला डाली जी।
यह नर पुंगव है भाग्यवन्त करसी रखवाली जी।
खमा-खमा कर गज होदे वैठाया-
महाराज-खूब वादिन्त्र वजाया जी ।।सु.।।१९।।

आडम्बर कर पोतनपुर में लाये-
महाराज-राज्य गादी वैठाये जी।
दाह कार्य कर खूब ठाठ से मित्र वुलाये जी।
आपस में मिल चारों ही हरषाए-
महाराज-करी भोजन की त्यारी जो!
सानन्द जिमाकर उन्हें कही फिर वीतक सारी जी।
सभी सभासद् सुनकर वाह वाह करते-
महाराज-कवि ने कवित सुनाया जी ।।सु.।।२०।।

दोहा :—विकी दक्षता पांच में, सुन्दरता सौ मांय।
वुद्धि जानों सहस में, पुण्य अखुट धन पाय ।।

रहे राज्य में सभी मित्र खुश होकर-
महाराज-आनन्द से दिवस वितावे जी।
कुछ समय वाद यों मंत्री सुत सवको चेतावे जी।
हो गई परीक्षा भाग्य तणी जो चाहते-
महाराज-चले निज देश मंझारी जो।
सुनकर तीनों मि॰ करी चलने की त्यारी जी।
सचिव वुला सव राज-काज संभलाया-
महाराज-वाद आदेश सुनाया जी ।।सु.।।२१।।

रहे प्रजा गण सभो मोद के माँही-
महाराज-नहीं हो कष्ट लिगारा जो।
पूरण रख कर प्रेम पालना फर्ज तुम्हारा जी।
प्रजाजनों को देय सान्त्वना चाले-
महाराज-देश निज चलकर आये जो।
मात-पिता के चरण नमो सब हाल सुनाये जी।
सुन पुत्रों की बात पिता यों बोले-
महाराज-मिले जो संग में लाया जी ।।सु.।।२२।।

उस समय वहाँ पर विचरत-2 आये-
महाराज-ज्ञान गुण के भंडारी जी।
धर्म घोष आचार्य महालब्धी के धारी जी।
वन्दन हित चारों मित्र वहाँ चल आये-
महाराज-और केई नर नारी जी।
सभा भवन में खिल रही मानों केशर क्यारी जी।
धर्म देशना दीनी गुरु ने भारी-
महाराज-श्रवण कर दिल हरषाया जी ।।सु.।।२३।।

चारों ही मित्र ले श्रावक व्रत शुद्ध पाले-
महाराज-मात पितु दीक्षा धारी जी।
शुद्ध संयम पालन करके सबने आतम तारी जी।
प्राकृत रचना देख द्रोण में गाया-
महाराज-अधिक ओछा जो कीना जी।
अरिहन्त साख रख मिथ्या दुष्कृत मैंने दीना जी।
भोग छोड़कर त्याग मार्ग अपनाओ-
महाराज-त्याग से केई नर तिरिया जी ।।सु.।।२४।।

'प्राज्ञचन्द्र' गुरुदेव महायशधारी-
महाराज-दयालू है उपकारी जी।
छह काया प्रतिपाल भव्यजन के हितकारी जी।
तास चरण रज 'मुनि सोहन' ने गाया-
महाराज-चौक पच्चीस बनाया जी।
भाग्य फलेगा उस नर का जो सुकृत लाया जी।
उत्तम साधन पाकर करणी कर लो-
महाराज-मिलेगा सुख मन चाया जी ।।सु.।।२५।।

—※—

६ | सदाचार : सच्चा शृंगार

दोहा :—शील समो जग में नहीं—धर्म, वीर फरमान।
जो धारे जीवन धरी, हो जावे कल्याण ।।
सागर सम गंभीर है, अचल सुमेरू समान।
अनेक ओपम दीपता, नमूँ सदा वर्धमान।

तर्ज :— राधेश्याम रामायण—

सुरपति नरपति नत मस्तक हो चरणों में आ गिर जावे।
शील तणी महिमा है मोटी-ऋषी मुनी सब गुण गावे ।।१।।

इस भारत में अति सुन्दर एक धारा नामक नगरी थी।
जहाँ के नायक भोज राज की न्याय नीति भी तगड़ी थी ।।२।।

सभी तरह सम्पन्न मनुष्य गण अति आनन्द से रहते थे।
चोर जार अरि दल के भय से कभी नहीं वे डरते थे ।।३।।

एक वक्त भूपती भोज ने मन में यों संकल्प किया।
शीलाचार नगरी में कैसा इसका नहीं मैं पता लिया ।।४।।

जिस नगरी में सदाचार और विद्या का विस्तार हुआ।
उस नगरी के भूधव का भी जीवन पाना सफल हुआ ।।५।।

अतः आज मैं इन बातों की जाँच करूँ निश्चय कीना।
निज मन्त्री को बुला पास में सभी हाल दरसा दीना ।।६।।

मंत्री कहे यह उचित सलाह पर भेष बदल चलना होगा।
बिना भेष बदले नहिं स्वामिन, कार्य सफल अपना होगा ।।७।।

दोनों तन में भस्मी रमाकर योगी रूप प्रस्थान किया।
एक हाथ में ले खप्पर दूजे में चिमटा धार लिया ।।८।

मारग में लख एक हवेली दोनों अन्दर जाते हैं।
रहकर खड़े भव्य प्रांगण में, सहसा अलख जगाते हैं ।।९।।

आये अतिथी अपने घर में देख गृहिणी हरपायी।
स्वागत हेतु चलकर सीधी दोनों के सम्मुख आई ।।१०।।

* उक्तं सुस्वागतं भवतां पावनी कृतमस्माकं गृहम् ।
अद्य सुष्ठु दिनमायातं शौभाग्यवती भवामि अहम् ।।११।।

साधू बोले+भिक्षां देहि" अतः यहाँ पर आये हैं ।
अर्थ दान की नहीं चाहना भिक्षा ही मन भाये हैं ।।१२।।

÷ इदमासनमलं क्रियतां, इस तरह बोल संकेत किया ।
मधुर वचन सुन सेठाणी के आसन को आ ग्रहण किया ।।१३।।

कुछ समय विराजें आप यहाँ, मैं भिक्षा वस्तु लाती हूँ ।
नही लगाऊँ विलम्ब वहाँ पर जल्दी वापिस आती हूँ ।।१४।।

भवन पास रमणीक बगीचे में सेठानी चल आयी ।
आम्र वृक्ष से तोड़ फलों को भिक्षा हित देने लायी ।।१५।।

उधर भूप के मन ही मन में उथल-पुथल मचने लागी ।
कितना सुन्दर रूप है इसका विषय रूप अग्नि जागी ।।१६।।

वाणी कोकिल से मीठी है-और रूप रति से है भारी ।
दन्ति से है चाल अनुपम, शोभा में शचि भी हारी ।।१७।।

रूपवती गुणवती नारियाँ अन्तःपुर में भरी अनेक ।
किन्तु इस नारी के सम तो मिले नहीं रणवास में एक ।।१८।।

किसी तरह भी अवसर पाकर बना लेऊँ इसको पटनार ।
यदि सेठ ने विघ्न किया तो दूँगा मौत के घाट उतार ।।१९।।

इधर भूप यह सोच रहा था उत पक्के फल वस्त्र मंझार ।
ले आयी सेठाणी सन्मुख करने लगी फलों को त्यार ।।२०।।

एक आम्र फल ले सेठाणी मसल रही रस लेने काज ।
दबा जोर से देखे आम को रस की बूँद न टपकी आज ।।२१।।

दूजा, तीजा, चौथा फल ले किया परिश्रम कर से पूर ।
एक बूँद भी नहीं आई तब सोचे कारण आज जरूर ।।२२।।

---

* बोली स्वागत करूँ आपका, पावन कीना घर मेरा ।
आज भला दिन उदय हुआ, सौभाग्य सुमन खिल गया मेरा ।।

+ भिक्षा देओ

÷ यह आसन स्वीकार करो !

श्लोक :--रे रे रसाल फल ! मुंचसि किं रसं नो ।
आवाल-पालित-विशुद्ध-पतिव्रताऽ हम् ।
यन्मे मनो न चलितं हि कदांन्यपुंसि ।
जानामि भोज—नृपतिः परदारलुब्धः ।

जिस तरह पुत्र को माता करती पालन पोषण करके प्यार ।
उसी तरह ही मैंने तुझको जल सिंचन कर लीनी सार ॥२३॥

किन्तु आज तू रस नहीं देता इती कृपणता क्यों आई ।
अतिथि दान के अवसर में क्यों तूने कीनी अकड़ाई ॥२४॥

यदि शंका हो मेरे प्रति तो प्रभु साक्षी कर कहती हूँ ।
हे आम्र फलों ! तुम सुन लेना, मैं सच्ची बात सुनाती हूँ ॥२५॥

मैंने पति के सिवा अन्य की मन से भी नहीं चाह करी ।
धर्म पतिव्रत पालन में ही लगा रही हूँ विशुद्ध घड़ी ॥२६॥

गुठली से यदि चाहूँ रस तो वह भी मुझको बक्षावे ।
तू रस पूरित होने पर भी क्यों नहीं रस को टपकावे ॥२७॥

ज्ञात हुआ नहीं दोष तुम्हारा और नहीं है मेरा दोष ।
समझ गई मैं इसमें सारा पृथ्वी पालक का है दोष ॥२८॥

पर नारी माता सम जानी करता था वह सद् व्यवहार ।
मनोविकारी भूप भोज का बदल गया है शुद्धाचार ॥२९॥

दोहा—सुन सेठाणी वाक्य को, चमक गया भूपाल ।
अन्तर्गत मुझ भाव को, जान गई वर नार ॥

बदल गई निज बुरी भावना, सती को समझी मात खरी ।
मन ही मन संताप भूप कर, गलती को स्वीकार करी ॥३०॥

धिक्कार मेरे भूधवपन को, मैं निज कर्तव्य को भूल गया ।
प्रजा मेरी संतान है, इसको चित्तसे ही मैं बिसर गया ॥३१॥

हे नाथ ! मेरी रक्षा कीजे मैं कभी न ऐसी भूल करूँ ।
पर नारी माता सम मानूं पाप पंथ से सदा डरूँ ॥३२॥

सदाचार और सद्विद्या में कितनी निपुण थी गृह नारी ।
अशुभ भावना भूप भोज की पलटा दी पल में सारी ॥३

विनय युक्त कर जोड़ भूपति कहे मात ! तुम सुन लीजे ।
आम्रफलों को कर में लेकर आशा पूरण अब कीजे ॥३४॥

हे मात ! तुम्हारे शील प्रभाव से फल अवश्य रस देंगे जी ।
सदाचार का तेज तुम्हारा आंखों से देखेंगे जी ॥३५॥

मैं सेठाणी रसाल फल को रस निचोड़ घट भर लीना ।
नृप चकित हो शुभ भाव से हुआ भजन में लव लीना ॥३६॥

तत्क्षण भूपति सती चरण में अपना शीश झुकाता है ।
हे मातेश्वरी ! माफ करो यों बारम्बार सुनाता है ॥३७॥

कुत्सित भावना आ गई दिल में रहा न मुझको कुछ भी ज्ञान ।
किन्तु आज तुम शील तेज से रह गई यहां पर मेरी शान ॥३८॥

योगी रूप जो देख रही हो वह मैं हूं मालव का नाथ ।
भूप भोज है नाम मेरा और है यह मंत्री मेरे साथ ॥३९॥

सदाचार और सद्विद्या का कितना है सद्भाव यहां ।
यही परीक्षा करने के हित चल आये हम साथ यहाँ ॥४०॥

देख तुम्हें हम समझ गये, इस नगरी में है पूर्ण उजास ।
कमी नहीं है मेरे राज्य में सफल हो गयी मेरी आश ॥४१॥

धन्य नारी तुम से ही मेरी राज्य लक्ष्मी श्रेष्ठ हुई ।
धन्य तुम्हारे मात तात को तुमसी कन्या सती हुई ॥४२॥

दोहा - इसी समय वहां आ गया दुकान से लाल सेठ ।
सुन घटित वृत्तान्त को जमी हृदय में पेठ ॥४३॥

यथाशक्ति सेवा कर नृप भोज को दिल में अति आनन्द पाया ।
प्रेम सहित करके सम्मानित पुनः भूप को पहुंचाया ॥४४॥

गुणानुवाद कर महासती को, नरपति ने शाबास दिया ।
निज नगरी की मार्ग मांग कर, राज्य ओर प्रस्थान किया ॥४५॥

कितना गौरव था भारत का जब ऐसी विदुषी नारी थी ।
गृह कारज में निपुण ज्ञान युत सदाचार प्रणधारी थी ॥४६॥

अब फैशन से नर नारी निज धर्म भ्रष्ट होते जाते ।
सद्ज्ञान नष्ट हो गया जिन्हों का होटल में खाना खाते ॥४७॥

सदाचार सा रत्न हाथ से जाता है नर के अधुना ।
वहुत अंश में चला गया है मित्रों ! कब होगा जगना ।।४८।।

त्रिलोक सम्पत्ति नष्ट हुई तो कुछ भी तुमने नहीं खोया ।
गर चला गया है शील धर्म तो सब कुछ यहाँ पर हो खोया ।।४९।।

करके कुछ सत्संग सीख लो सद्विद्या अरु शीलाचार ।
महावीर वाणी से ले लो नर जीवन पाने का सार ।।५०।।

प्राज्ञचन्द्र गुरुदेव कृपा से विचरत भीलवाड़ा आये ।
मोती भवन में 'मुनि सोहन' यह कथा जोड़ करके गाये ।।५१।।

५ १ ० २
दोहा :—*पाण्डव, भू, ख, भुजाब्द में, होली चातुर्मास ।
श्रावक संघ के हृदय में, उमड़ा अति उल्लास ।।



* विक्रम संवत् २०१५

७ विषय विकार : जीवन का ख्वार

तर्ज :—लावणी खड़ी

बुद्धिमान् बलवान् धनपति सभी नष्ट हो जाते हैं।
विवेक खोकर के मानव जो विषयों में फंस जाते हैं ।।टेर।।

मालव देश का स्वामी था इक मुंज महीपति अति बलवान।
सरस्वती का परम भक्त विद्वान् शिरोमणि महागुणवान् ।।
राज काज में बहुत निपुण नित जन-जन करते हैं गुणगान।
सभी तरह से प्रजाजनों का रखता है वह पूरा ध्यान ।।
सारे गुण संसार बीच में विरले जन ही पाते हैं ।।विवेक०।।१।।

एक वक्त ले सेना साथ में कर्नाटक पर चढ़ आया।
महाराज तैलप लख करके शत्रु सैन्य को घबराया।
किन्तु युद्ध करने को वह भी रण भूमि में चल आया।
घमासान हो गया समर पर मुंज अन्त में जय पाया।
ऐसे सौलह बार हार कर तैलप उसे हराते हैं ।।२।।

जिन्दे मुंज को पकड़ कैद में लाकर के रख दीना है।
किये कर्म का फल भोगो यों भूप हुक्म दे दीना हैं।
टुकड़े मांग कर खावो रोटी ऐसा प्रबंध भी कीना है।
अन्य पुरुष भी मिल न सके एकान्त स्थान रख दीना हैं।
देख व्यवस्था मुंज हृदय में बार-बार पछताते हैं ।।३।।

विधवा बहन तैलप की वहाँ पर यदा कदा आ जाती है।
देख मुंज का रूप अनुपम उन पर मुग्ध हो जाती है।
मृणालवती लख मौका उनसे अपनी आंख मिलाती है।
इतने दु:ख में पड़ा मुंज पर विषयासक्ति छा जाती है।
स्थान समय और ईज्जत अपनी विषयी समझ न पाते हैं ।।४।।

मृणालवती और मुंज परस्पर पूर्ण प्रेमी हो जाते हैं।
क्या होगा भावी में अपना यह शंका नहीं लाते हैं।

देख-रेख का बना बहाना दोनों वहां मिल जाते हैं ।
संकट में भी विषय लम्पटी मन में नहीं शरमाते हैं ।
गुप्त मिलन होता दोनों का कोई पता ना पाते हैं ।।५।।

मालवेश के मंत्री ने सुन एक सुरंग खुदाई है ।
मालव से ले कर्नाटक तक मुंज पास पहुचाई है ।
सुरंग राह से जाऊँ मुंज के ऐसी मन में आई है ।
मृणालवती को ले लूं साथ में, मुझ को यह सुखदाई है ।
मुंज पास में बैठा उसको अपनी बात सुनाते हैं ।।६।।

सुनकर सारी बातें बहन ने आ भाई से कह दीनी ।
मुंज सुरंग से जाने वाला चेतो यों जाहिर कीनी ।
तैलप ने जा खूब घोर से सुरंग राह को लख लीनी ।
सुरंग मांही घुसते मुंज की चोटी सद्य पकड़ लीनी ।
कर पग में जंजीर डाल कर ऐसा हुक्म सुनाते हैं ।।७।।

काला मुख नीला पग करके खर पर इसको बैठाओ ।
फूटा ढ़ोल बजा सामने सारे शहर में घुमाओ ।
विषय अंध मानव की ऐसी होती दशा यह बतलाओ ।
मृत्यु दंड मिलता है उनको ऐसे सब को समझाओ ।
फिर फांसी पर लटका देना तैलप यों दरसाते हैं ।।८।।

हुक्म मुनासिब काम किया और शव को बाहर फैंक दिया ।
काक श्वान ने आकर शव को खूब मोज से नोच लिया ।
रुली खोपड़ी पैरों माँही कभी न कोई ध्यान दिया ।
एक विदेशी देख खोपड़ी कर में उसको उठा लिया ।
'वहु बीती अब क्या बीतेगी' पढ़कर संग में लाते हैं ।।९।।

अपने घर ला करके खोपड़ी पेटी मांही रख दीनी ।
समय-समय पर आके देखे पूरी सार [illegible] लीनी ।
ऐसा करते देख हमेशा सेठाणी मन में [illegible] ।
क्या वस्तु है अमूल्य इस में देखूं सोचे [illegible] ।
उठा खोपड़ी पढ़कर अक्षर [illegible] ।।१०।।

उस ही क्षण कर चूरण उसका आटे माही मिला दिया।
भोजन कर तैयार त्वरित ही सेठ साहब को खिला दिया।
भोजन कर संदूक पास आ सत्वर उसको खोल लिया।
नहीं मिलने पर सोचे मन में लेकर उसको कौन गया।
घर वालों के सिवा यहां पर कौन चलाकर आते हैं ॥११॥

आकर पूछा सेठाणी से कहो खोपड़ी कहाँ गई।
बिना इजाजत इस मकान में आने वाला कोई नहीं।
सेठाणी कहे मैंने लीनी अक्षर उसके पढ़े सही।
वह दासी अब क्या दीसेगी लिखे हुए थे साफ यही।
सेठ कहे कहां रख दी उसको क्यों नहीं साफ बताते हैं ॥१२॥

सेठाणी कहे आप पेट में रखते ही वह वमन किया।
अरे लम्पटी मूंज ! दुःख पा तूने मुझको दुःख दिया।
नहीं टिका तू मेरे पेट में यह दीसेगी लिखा लिया।
आज प्रतापे 'सोहन मुनि' कहे किसको जीवन ख्वार किया।
दो हजार पैंतीस चौमासा मदनगंज सुख पाते हैं ॥१३॥



८ | तपः शिरोमणि श्री स्थूली भद्रजी

तर्ज :—द्रोण

जप तप कितना करे कोई भी मानव-
महाराज-हृदय जब नहीं पलटावे जी।
रखे ईर्ष्या भाव जगत में गोता खावे जी ।।टेर।।

जैनाचार्य संभूति पास में जाकर-
महाराज-शिष्य गण यों दरसावे जी।
अलग-अलग चोमासे हित आज्ञा फरमावे जी।
एक कहे मैं सिंह गुफा पर जाकर-
महाराज-द्वितीय बाँबी पर जाऊँजी।
कहे तीसरा कूप किनारे ध्यान लगाऊँ जी।
स्थूलिभद्र कहे जाऊँ मैं कोशा (वैश्या) के
महाराज-गुरु आज्ञा फरमावे जी। रखे ।।१।।

आज्ञा पाकर इच्छित स्थान स्थान पर जावे-
महाराज-वेश्या पाड़े में आवे जी।
स्थूलिभद्र को देख वैश्या मन में हर सावे जी।
ये आये वापिस मन चाया मुझ फलिया-
महाराज-खूब आनन्द मनाऊँ जी।
मिला हुआ धन यौवन इन संग सफल बनाऊँ जी।
करके भक्ति चित्रशाल में लायी-
महाराज-आज्ञा देकर ठहरावे जी। रखे ।।२।।

हाव भाव कर वश में करना चाहती-
महाराज-देख मुनिवर फरमावे जी।
गया वक्त वह भोग नहीं मुझको अब भावे जी।
तू भी समझ यह भोग नष्ट होने का-
महाराज-भवो भव दुख का दाता जी।

उस ही क्षण कर चूरण उसका आटे माही मिला दिया।
भोजन कर तैयार त्वरित ही सेठ साहब को खिला दिया।
भोजन कर संदूक पास आ सत्वर उसको खोल लिया।
नहीं मिलने पर सोचे मन में लेकर उसको कौन गया।
घर वालों के सिवा यहाँ पर कौन चलाकर आते हैं ॥११॥

आकर पूछा सेठाणी से कहो खोपड़ी कहाँ गई।
विना इजाजत इस मकान में आने वाला कोई नहीं।
सेठाणी कहे मैंने लीनी अक्षर उसके पढ़े सही।
वहु बीती अब क्या बीतेगी लिखे हुए थे साफ यही।
सेठ कहे कहाँ रख दी उसको क्यों नहीं साफ बताते हैं ॥१२॥

सेठाणी कहे आप पेट में सुनते ही वह वमन किया।
अरे लम्पटी मुंज ! दुःख पा तूने मुझको दुःख दिया।
नहीं टिका तू मेरे पेट में यह बीतेगी लिखा लिया।
प्राज्ञ प्रसादे 'सोहन मुनि' कहे विषयो जीवन ख्वार किया।
दो हजार पैंतीस चौमासा मदनगंज सुख पाते हैं ॥१३॥



८ | तपः शिरोमणि
श्री स्थूली भद्रजी

तर्ज :—द्रोण

जप तप कितना करे कोई भी मानव-
महाराज-हृदय जब नहीं पलटावे जी।
रखे ईर्ष्या भाव जगत में गोता खावे जी ॥टेर॥

जैनाचार्य संभूति पास में जाकर-
महाराज-शिष्य गण यों दरसावे जी।
अलग-अलग चोमासे हित आज्ञा फरमावे जी।
एक कहे मैं सिंह गुफा पर जाकर-
महाराज-द्वितीय बाँबी पर जाऊँजी।
कहे तीसरा कूप किनारे ध्यान लगाऊँ जी।
स्थूलिभद्र कहे जाऊँ मैं कोशा (वैश्या) के
महाराज-गुरु आज्ञा फरमावे जी। रखे ॥१॥

आज्ञा पाकर इच्छित स्थान स्थान पर जावे-
महाराज-वेश्या पाड़े में आवे जी।
स्थूलिभद्र को देख वैश्या मन में हरसावे जी।
ये आये वापिस मन चाया मुझ फलिया-
महाराज-खूब आनन्द मनाऊँ जी।
मिला हुआ धन योवन इन संग सफल बनाऊँ जी।
करके भक्ति चित्रशाल में लायी-
महाराज-आज्ञा देकर ठहरावे जी। रखे ॥२॥

हाव भाव कर बश में करना चाहती-
महाराज-देख मुनिवर फरमावे जी।
गया वक्त वह. भोग नहीं मुझको अब भावे जी।
तू भी समझ यह भोग नष्ट होने का-
महाराज-भवो भव दुख का दाता जी।

करके इनका संग जीव दुर्गति में जाता जी।
सुनकर के उपदेश वेश्या दिल सोचे-
महाराज-जीवन आस्रव में जावेजी। रखे ॥३॥

वेश्या पाकर ज्ञान श्रावक व्रत धारे-
महाराज-कुशील का खंध उठाया जी।
करके संगत संत पुरुष की दिल पलटाया जी।
करके चातुर्मास पूर्ण सब आये-
महाराज-गुरु को शीश झुकावे जी।
तीन शिष्य को गुरु देव ऐसे दरसावे जी।
दुस्कर करणी करने वाले हो तुम-
महाराज-स्थूलि मुनिवर जब आवे जी। रखे ॥४॥

महादुष्कर करके कार्य मुनिवर आये-
महाराज-धन्य गुरुवर ने दीना जी।
कायर नहीं कर सके त्याग वैसा तुम कीना जी।
सुन गुफावासी मुनि मन माँहीं यों सोचे-
महाराज-ऐसा क्या तप कर आया जी।
चित्रशाल में रह वेश्या घर मौज उड़ाया जी॥
ईर्ष्या धर कर ऐसा निर्णय कीना-
महाराज-चौमासा अब के आवे जी। रखे ॥५॥

करूँ वही मैं वेश्यालय में जाकर-
महाराज-गुरु से आज्ञा चावे जी।
गुरुवर देखी भाव नहीं कुछ भी फरमावे जी।
बिना आज्ञा से चला गया वेश्या के-
महाराज-देखकर भक्ति कीनी जी।
चौमासे हित चित्रशाल की आज्ञा लीनी जी।
समझ गई वैश्या ईर्ष्यावश आये-
महाराज-वातकर भाव रखावे जी। रखे ॥६॥

जान गई संयम से डिग गये पूरे-
महाराज-तभी मुनि यों दरसावे जी।
मैं चाहूँ तुमको बार-बार मुख से बतलावे जी।
सुनकर उनकी बात वैश्या यों बोली-
महाराज-अर्थ बिन काम न चाले जी।
यदि चाहो मुझ को आप काम सत्वर कर डालें जी।
नेपाल भूपति रत्न कम्बल देता है-
महाराज-त्वरित जाकर ले आवें जी। रखे ॥७॥

फिर सोचूँगी बात आप जो कहते-
महाराज-उसी क्षण हुए रवाना जी।
नहीं रहा कुछ ध्यान चौमासा यहाँ बीताना जी।
चलते-चलते नेपाल देश में आये-
महाराज-याचना नृप से कीनी जी।
उसी वक्त ला रत्न कम्बल उनको दे दीनी जी।
वापिस आते चोर लूट ली कम्बल-
महाराज-ऊपर से मार उड़ावे जी। रखे ॥८॥

पुनः लौटकर पहुंचे कम्बल हेतू-
महाराज-दीनता अति दरसावे जी।
मिलते ही कम्बल सावधानी से लेकर आवे जी।
अति कठिनाई भोग कम्बल को लावे-
महाराज-वैश्या कर माँही दीनी जी।
झट पैर पोंछ शौचालय माँही ला रख दीनी जी।
यह दृश्य देख मुनि विस्मय युत हो बोले-
महाराज-किया क्या शर्म न आवे जी। रखे ॥९॥

कितना परिश्रम करके इसको लाया-
महाराज-सद्य ही इसे बिगारी जी।
नही कीना कुछ भी ध्यान चीज है कीमत वारी जी।
वैश्या बोली मैंने समझकर कीना-
महाराज-आप निज राह विसारी जी।

कितना ही अनमोल संयम नहीं ध्यान विचारी जी ।
यदि स्वयं शचीपति भीख मांगने आवे-
महाराज-सफलता वह नहीं पावे जी । रखे ॥१०॥

स्थूलि भद्र सा त्यागी नजर नहीं आया-
महाराज-ईर्ष्या मन में लाये जी ।
देख आप इन भोग लालसा में उलझाये जी ।
उस ही क्षण मुनि वेश्या चरण गिर बोले-
महाराज-सीख मैंने यहां पाई जी ।
हो सच्ची गुरुणी आप मेरी मैं आज बनाई जी ।
कहकर वापिस गुरु पास में आये-
महाराज-पुनः दीक्षा ली भावे जी । रखे ॥११॥

ईर्ष्या वस हो देखा देखी करते-
महाराज-अन्त में धोखा खावे जी ।
होकर वासना के वश जग में दुःख उठावे जी ।
प्राज्ञ प्रसादे 'मोहन मुनि' यों कहता-
महाराज-काम तज आनन्द पावे जी ।
स्थूलि भद्र का चरित्र सुनी शिक्षा अपनावे जी ।
दो हजार पैंतीस मदनगंज माही-
-महाराज-चौमासा रंग बरसावे जी ॥१२॥

—*—

९ धर्म कहाँ ? विवेक जहाँ

(तर्ज : नेमजी की जान बनी भारी)

विवेक बिन धर्म नहीं भाई, बात यह ज्ञानी फरमाई ।।टेर।।
अहो निशि उपासना माँही, रहे कोई नर वन में जाई ।
तपस्या करे मास तांई, पारणे शुष्क पत्र खाई ।।
दोहा— कल्प कोटि करणी करे-रक्खे नहीं विवेक ।
केवलज्ञानी उस करणी को, नहीं समझते नेक ।।
लेख यह आगम के मांही ।।१।।

कौशाम्बी नगरी के मांही, सेठ है धनदत्त सुखदाई ।
नार है विमला गुण ग्राही, सुशीला पुत्री घर माँही ।।
दोहा— पढ़ा लिखा कर पुत्री को, कर दीनी हुशियार ।
घर वर योग्य देख परणाऊँ, करता सेठ विचार ।।
रात दिन इसी फिक्र मांही ।।२।।

एक दिन हरिपुर में आया, पूछकर पता वहां पाया ।
सेठ जिनदास बतलाया, नाम सुन मन में हरसाया ।।
दोहा— आया सेठ के द्वार पे, पूछे सब हालात ।
धर्मदास सुत को लखकर के, कह दीनो निज बात ।।
प्रसन्न हो कर लीनी साई ।। बात ।।३।।

ब्याह कर ससुर गृहे आई, आनंद में बंट रही मीठाई ।
[1]गेह में रंग रली छाई, कंवरी मन परमानन्द पाई ।।
दोहा— संध्या समय आ भृत्य ने, दीपक मांही तेल ।
डाला तो एक बूंद गिर गई, देख रहे सब खेल ।।
सेठ ने लीनी उठाई ।। बात ।।४।।

लगा जूती के चल दीना, कंवरी लख विचार यों कीना ।
अहो मम श्वसुर कृपण सीना, पिता ने अच्छा नहीं कीना ।।

१-घर

दोहा— इस घर में मेरा गुजर, कैसे होगा ईश।
जहाँ पर हो इतनी कंजूसी, रहे प्रतिक्षण चीस ।।
ससुर से प्रातः कहलाई ।। बात ।। ५ ।।

मेरे सिर दर्द होय भारी, लगे सब वस्तु मुझे खारी ।
दुखद है रंग रलियाँ सारी, पीहर को जाउँ इस बारी ।।
दोहा— कहा सेठ ने मैं यहाँ, लाउँ डाक्टर खास ।
अभी ईलाज कराउँ तेरा रख दिल में विश्वास ।।
दास को लीना बुलवाई ।। बात ।। ६ ।।

सुशीला बात यों दरसाई, डाक्टरी दवा है दुखदाई ।
मेरे नहीं माफगत आई, ईलाज लिया पहले करवाई ।
दोहा— जब-जब भी यह दर्द हो, करे एक उपचार ।
असली मोती घोट खरल में, लेप करे उस वार ।
सार सब दीना दरसाई ।। बात ।। ७ ।।

उसीक्षण सेठ हुक्म दीना, पाव भर मोती मंगा लीना ।
बहू के पास भेज दीना, दास को ऐसे कह दीना ।।
दोहा— चाह और तो फेर ही, कह देना तत्काल ।
आ जावेंगे तुरत फुरत से, करना मत कुछ ख्याल ।
बात श्रेष्ठी ने कहलाई ।। बात ।। ८ ।।

अमूल्य लख मोती अपने पास, कँवरी मन आया अति उल्लास ।
समझ में भूल हुई मुझ खास, बात क्या पूछ करूँ विश्वास ।।
दोहा— तेल बूंद को कर ग्रही, करी कृपणता पूर ।
भेज कीमती मोती पास में, कर दी शंका दूर ।।
समझ में मेरे नहीं आई ।। बात ।। ९ ।।

करुं क्यों लाखों की हानी, बुलाई दासी मन मानी ।
सुशीला बोली यों बानी, सेठ को मुक्ता दे आनी ।।
दोहा— कह देना अब ठीक है, नहीं मुक्ता को चाह ।
दासी मुक्ता गठरी दीनी, लीनी कर में शाह ।।
बात वह सारी दरसाई ।। बात ।। १० ।।

सेठ दिल विस्मय अति पाया, कारण क्या वापिस भिजवाय।
करु निर्णय मन में लाया, सोच कर बहू पास आया ॥

दोहा— कहो पुत्रि ! किस कारणे, मुक्ता दिया भिजाय।
कह दो क्या है मन में तेरे, शंका दूर भगाय ॥
सुशीला मन की बतलाई ॥ वात ॥ ११ ॥

वात इक तेल बूंद वारी, सुना दी दिल में थी सारी।
खता सब माफ होय म्हारी, मेरे दिल शंका थी भारी ॥

दोहा— सेठ कहे उस बूंद से, मरते जीव अपार।
तेल गन्ध से आ जाते तब, देखें कौन नर-नार ॥
हिंसा से बचने के तांई ॥ बात ॥ १२ ॥

शिक्षा की बात सुन पाई, विवेक बिन धर्म होय नाँही।
सुशीला जीवन भर तांई, जमादी बात हृदय माँही ॥

दोहा— प्राज्ञ कृपा "सोहन मुनि" कहे यों बारम्बार।
धर्म मर्म को समझो बँधव, रखो विवेक विचार ॥
होय यह मुक्ति का सहाई ॥ बात ॥ १३ ॥



१० तृष्णा का नहीं अन्त

(तर्ज :- लावणी खड़ी.)

तृष्णा का नहीं अन्त हुआ है, होगा मानव तन का अन्त ।
सुकृत करके लाभ कमाले - सदा यही चेताते सन्त ।। टेर ।।

सुभूमपुर में 'गज' व्यापारी-दीन हीन था बिन रुजगार ।
धर्म साधना से वँचित था, जाता जिनका दिन दुखकार ।।
फिरे पेट के लिए भटकता, किन्तु पेट भर मिले न आहार ।
तंगी से दिन बीत रहे, वह पा रहा दिल में दुःख अपार ।।
इक दिन आते मार्ग बीच में मिल गये उनको ज्ञानी संत ।। १ ।।

कहा सन्त ने धर्म लाभ लो, यह अवसर नहीं आने का ।
सेठ कहे नहीं घर में पूरा, आटा दाल भी खाने का ।।
जहां पेट भर मिले न रोटी कैसे धर्म कमाने का ।
सन्त गये वह आया घर पर सोचे शुभ दिन आने का ।।
भली वक्त आने वाली है तभी मिले है मुझे महन्त ।। २ ।।

समय बाद कुछ हुई कमाई खाना समय पर आता है ।
सरल तरीके से पा लेता जितना खर्च लग जाता है ।।
यों अनुक्रम से दिवस गुजारे सन्त मार्ग में मिलते है ।
करते क्यों नहीं धर्म साधना विरथा दिवस निकलते है ।।
क्षण-२ करते आयुष जाती हो जावेगी इक दिन अन्त ।। ३ ।।

वह बोला हूँ समाज में यदि समाज लायक होवे आय ।
तभी करुँगा धर्म साधना मुनिराज से यों दरसाय ।।
मुनि गये व्यापार बढ़ाया चन्द समय में सम्पति पाय ।
अब तो सोचे भवन बनाऊँ तीन मंजिला हो सुखदाय ।।
घर आकर माता से बोला अपने दिल का सब विरतन्त ।। ४ ।।

माता बोली क्यों आरंभ कर विरथा कर्म कमाता है ।
घर में केवल तीन जीव है किसके लिये बनाता है ।।

नहीं मानी है बात किसी की चतुर मिस्तरी लाता है।
लगा कई मजदूर त्वरित ही सुन्दर भवन कराता है॥
सभी कार्य हो गया भवन का अब अन्दर रहने की खन्त[1] ॥ ५ ॥

इक दिन का है शेष कार्य माँ देख उसे वापिस आऊँ।
माता कहतो भोजन करले, पुत्र कहे पीछे खाऊँ॥
किया निरीक्षण बड़े गौर से अब तो भवन में आ जाऊँ।
कई कल्पना बाँध रहा है- जा इच्छित भोजन पाऊँ॥
कारीगर से कहे लगावे यहाँ पर अच्छा हस्तिदन्त ॥ ६ ॥

मिस्त्री कर से छूट हथौड़ा सेठ शीश पर आया है।
चोट लगी और गिरे सेठजी प्राण तभी विरलाया है॥
सारे साधन पड़े रहे हैं ज्यों के त्यों भण्डारो में।
धर्म साधना कर न सका वह खाली गया संसारो में॥
प्राज्ञ प्रसादे 'सोहन मुनि' कहे धर्म भाव दुर्गति टारन्त ॥ ७ ॥

दो हजार उन्तीस मसूदा चौमासा आनन्द कारी।
ठाणा पाँच से रहे मोद में श्रावक श्राविका सुखकारी॥
पचरंगी नवरंगी कीनी धर्म का ठाठ लगा भारी।
बेला तेला और अठाया जिनकी गिनती है न्यारी॥
वर्षावास समापन करके ब्यावर को आये सब सन्त ॥ ८ ॥



---

१. इच्छा

११ सम्यक्त्व का लाभः आत्मा की आभ

(तर्ज :- एवन्ता मुनिवर)

शुद्ध समकित धारो- चाहो छुटकारो यदि जग जाल से ।। टेर ।।
अरिहन्त देव निर्ग्रन्थ गुरु और जिनभाषित हैं धर्म ।
समकित यह व्यवहार कहावे- जीवन करदे पर्मजी ।। १ ।।

निश्चय में है देव आतमा, गुरुवर है सद्ज्ञान ।
स्वरक्षा का धर्म आदरे, हो जावे उत्थान जी ।। २ ।।
अनादि काल से जीव फंसा है मिथ्यामत के मांय ।
चन्द समय के लिए छोड़ कर जो समकित में आय जी ।। ३ ।।

भव भ्रमण मिट जाय जीव का निश्चय मुक्ति पाय ।
अनन्त चौकड़ी दर्शन त्रिकयों, सात प्रकृति हटाय जी ।। ४ ।।

अल्पकाल भी समकित पावे शुक्ल पक्षी कहलावे ।
इस पर कथा सुनाऊँ तुमको मन एकाग्र बनावेजी ।। ५ ।।

एक समय श्री वीर प्रभूजी शिष्य मण्डली साथ ।
विचर रहे थे भूमण्डल पर भव्य जीव हित नाथ जी ।। ६ ।।

मारग मांही खेत हाँकते देखा एक किसान ।
गौतम से प्रभु ने फरमाया- देओ इसको ज्ञान जी ।। ७ ।।

इसे लाभ होवेगा गहरा सुन करके उपदेश ।
संवेग भाव जागेगा इसमें, सुन जड़ चेतन भेद जी ।। ८ ।।

आज्ञा पा गौतम वहां आये, कृषक हृदय हुआ राजी ।
नमन करी आ संमुख बोला, है पुण्यवानी ताजी जी ।। ९ ।।

दर्शन से मन प्रसन्न हो गया करी प्रशंसा पूर ।
धन्य दिवस है आज मेरा अब गया दारिद्दर दूर जी ।। १० ।।

गौतम स्वामी कहे उसे तू, ध्यान लगा सुन भाई ।
क्यों खोता है नरभव उत्तम, भली वक्त यह पाई जी ।। ११ ।।

पर कारण क्यों जन्म गमावे- ज्ञानी वचन संभार।
अहो निशि कर्म कमाकर करता उल्टा जीवन ख्वार जी ॥ १२ ॥

देकर विविध तरह से हेतु सोया ज्ञान जगाया।
अनन्त काल के मिथ्या मोह को दे उपदेश भगाया जी ॥ १३ ॥

सुनकर बोला सत्य प्रभो ! मैं, यों ही समय गवांया।
आज हुआ है मालूम मुझको, विरथा कर्म कमाया जी ॥ १४ ॥

समझ विना मैं सारी ऊमर, वंध कर्म का कीना।
जगत जाल में फँसकर यों ही जीवन को खो दीना जी ॥ १५ ॥

अव मुझको वह राह वतावे, करु कर्म का छार।
गौतम कहे चरित्र विना नहीं होवेगा उद्धार जी ॥ १६ ॥

उस ही क्षण ले दीक्षा संग में कर दीना विहार।
रास्ते मांही पूँछे स्वामिन् आगे कहाँ विचार जी ॥ १७ ॥

अब कितना चलना हैं हमको ठहरेंगे कहाँ जाय।
अपने गुरु के पास जायेगे यों गौतम फरमाय जी ॥ १८ ॥

शिष्य कहे क्या है कोई ऊँचा बढ़कर आप समान।
नर नरेन्द्र देवेन्द्र पूज्य हो सबसे आप महान जी ॥ १९ ॥

गुरु हमारे वीर प्रभू है उन सा नहीं जग मांय।
सुर सुरेन्द्र सुर गुरु भी जिनके गुण का पार न पाय जी ॥ २० ॥

सुन करके गुण वीर- प्रभू का ग्रंथी भेद करायी।
अपूर्व करण अनिवृत करण पा, समकित निर्मल पायी जी ॥ २१ ॥

देखा दूर से अतिशय प्रभु का रोम - रोम विकसाय।
उससे दृढ़ समकिती बना वह चलकर आगे आय जी ॥ २२ ॥

जहाँ विराजे जगत शिरोमणि वर्धमान भगवान।
सिंहासन पर लख कर प्रभु को शिष्य हुआ हैरान जी ॥ २३ ॥

गौतम कहे ये गुरु हमारे विधिवत वंदन कीजै ।
जन्म - जन्म के लगे पाप अब गंगा है धो लीजे जी ॥ २४ ॥

शिष्य कहे यदि गुरु आपके ये है तो सुण लीजे ।
नहीं चाहूंगा रहूंगा यहां मैं मरजी हो सो कीजे जी ॥ २५ ॥

नहीं रहूंगा शिष्य आपका जाऊंगा निज स्थान ।
ऐसे ही हो गया संग में नहीं था मुझको ज्ञान जी ॥ २६ ॥

इतना कह कर तत्क्षण उसने दीने वस्त्र उतार ।
सत्वर वहां से हुआ रवाना नहीं लगाई बार जी ॥ २७ ॥

सन्तों ने ये हाल देखकर - कहा हँसी में आन ।
शिष्य मूंड कर अच्छा लाये खूब करी पहचान जी ॥ २८ ॥

सबकी वाणी सुन गौतम जी लज्जित हुए अपार ।
शिष्य बनाकर कर लाया था मैं कुछ नहीं निकला सार जी ॥ २९ ॥

प्रभु फरमावे गौतम दिल से शंका दूर निवार ।
मन में ऐसा मत सोचो तू मेहनत गई बेकार जी ॥ ३० ॥

तेरे द्वारा सुन जिनवाणी चेत गया इस बार ।
अनन्त काल का मिथ्या दर्शन दीना इसने टार जी ॥ ३१ ॥

कृष्ण पक्षि था शुक्ल - पक्षि बन किया परित संसार ।
भव सागर से बाहर निकला पाया लाभ अपारजी ॥ २३ ॥

गौतम कहे किस कारण प्रभु ये द्वेष हृदय में लाया ।
दर्शन करते ही जाने का इसे भाव क्यों आया जी ॥ ३३ ॥

वीर कहे है पूर्व जन्म का संबंध इसके साथ ।
आदि अन्त तक की मैं तुमको सभी सुनाऊँ वात जी ॥ ३४ ॥

कई भवों के पहले वैर का संबंध जोड़ा इससे ।
मुझे देखकर इसके दिल में द्वेष जगा है जिससे जी ॥ ३५ ॥

पोतनपुर था [illegible]

प्रजा पाल [illegible]

पुरुषोत्तम [illegible]

धीर-वीर [illegible]

उसी [illegible]

प्रतिवासु [illegible]

एक दिन [illegible]

[illegible]

उसी समय आदेश सुनाया विधिवत् नृप वहाँ जावे।
रखवाली वहाँ करे अहो निशि, शेर न आने पावे जी ।। ५० ।।
हुक्म मुआफिक गये भूप गण सिंह हाथ नहीं आया।
किये अनेक उपाय तथापि काम एक नहीं आया जी ।। ५१ ।।
विधिवत् जाते 'प्रजापति' की एक दिन बारी आई।
जाते देख पिता को त्रिपृष्ट बोले कर नरमाई जी ।। ५२ ।।
कहाँ पधारो आप आज यह आज्ञा मुझको दीजै।
पिता कहे त्रिखण्ड नाथ की आज्ञा है सुन लीजै जी ।। ५३ ।।
शाली खेत की रक्षा करने जो मानव वहाँ जावे।
नरभक्षी एक सिंह हमेशा आकर उन्हें सतावे जी ।। ५४ ।।
अतः वहाँ की रक्षा करने क्रमशः भूपति जावे।
उस ही क्रम में आज मेरी भी बारी वहां की आवे जी ।। ५५ ।।
सुन कर सारी बात कंवर कहे, यह है मेरा काम।
अभी जाय जनता का संकट कर दूँ दूर तमाम जी ।। ५६ ।।
योग्य समझ दी आज्ञा सुत को, कंवर खेत पर आया।
नहीं लिया है साथ अन्य को एक सारथी लाया जी ।। ५७ ।।
आया सिंह खेत पर तब ही कंवर लिया ललकार।
करो गर्जना सन्मुख आया, सिंह वहाँ उस बार जी ।। ५८ ।।
दोनों कर से पकड़ जबाड़े चीर दिया तत्काल।
जमी पड़ा अधमरा केसरी मन में करे विचार जी ।। ५९ ।।
बलशाली वनराज कहाऊँ, निहत्थे से हारा।
तभी सारथी ने उस सिंह को, मधुर शब्द उच्चारा जी ।। ६० ।।
जैसे तुम इस जगती ऊपर कहलाओ वनराज।
वैसे ही है यह पुरुषोतम मानव में सरताज जी ।। ६१ ।।
सामान्य पुरुष से नहीं मरे तुम सुनो मेरी वनराज।
महाबली हो तुम भी यह भी, कहलाते नरराज जी ।। ६२ ।।
मधुर शब्द सुन सारथी मुख से सिंह अति सुख पाया।
चन्द समय पश्चात् सिंह के प्राण परत्र सिधाया जी ।। ६३ ।।
कंवर, सारथी और सिंह यह, तीनों पर भव मांही।
फिरे भटकते बहुत समय तक मिले यहां पर आयी जी ।। ६४ ।।

त्रिपृष्ठ वासु का जीव बना मैं, सारथी हुआ तू आय।
सिंह भटकता आया यहाँ पर किसान भव के मांय जी ।। ६५ ।।
उस जीवन का मधुर संबंध है तेरा स्नेह अपार।
देख मुझे वह वापिस लौटा जगा पूर्व का खार जी ।। ६६ ।।
सुन उपदेश तेरा यह लीना समकित व्रत को धार।
शुक्ल पक्षी बन इस किसान ने किया परित संसार जी ।। ६७ ।।
किंचित काल भी समकित आ गई हो गया वही निहाल।
पुद्गल अर्द्ध परावर्तन कर काटे भव जंजाल जी। ६८ ।।
अव्याबाध अनन्त सुखों का निश्चय पावे स्थान।
अतः तुम्हारे द्वारा इसको हो गया लाभ महान् जी ।। ६९ ।।
सुनकर सभी जनों के दिल में गहरी श्रद्धा आई।
देव गुरु और धर्म तत्व को लीना हृदय जमाई जी ।। ७० ।।
प्राज्ञ प्रसादे 'सोहन मुनि' कहे कथा परम सुखकारी।
अविचल समकित धारो दिल में, देवे भव दुःख टारी जी ।। ७१ ।।
दोय सहस अठवीस में 'हुरड़ा' शुक्ला पूनम जेष्ठ।
दो ठाणों से आये विचरते धर्म ध्यान हुआ श्रेष्ठ जी ।। ७२ ।।



१२ | निर्णय करके बात पर, कीजो तुम विश्वास

(तर्ज : एवन्ता मुनिवर नाव)

श्रोतागण सुनिये, निर्णय लेकर ही मानो बात को ।।टेर।।

श्रवण सुनी और आँखों देखी बात झूठ हो जाय ।
किन्तु निर्णय करने से ही ठीक पता लग पाय जी ।। १ ।।

कंचनपुर नरवाहन नृप की शोभा है चहूँ ओर ।
रह न सके कोई भी पुर में अत्याचारी चोर जी ।। २ ।।

कंचन वर्णी कमला राणी परम विदुषी नार ।
दीन दुःखी जन की नित करती पूरी सार संभार जी ।। ३ ।।

एक दिन चर्चा चली सभा में सत्य बात है कौन ।
कोई देखी, सुनी कहे कोई, कोई रखता मौन जी ।। ४ ।।

राजा बोला मंत्री से तुम कह दो अपने भाव ।
मंत्री कहे निर्णय बिन सब ही मिथ्या समझो रावजी ।। ५ ।।

भूप कहे क्या आँखों देखी कभी झूठ हो जाय ।
मंत्री कहे हाँ हो सकती हैं दूँगा कभी बताय जी ।। ६ ।।

राजा बोला नहीं हृदय में तेरी बात समाय ।
समाधान दो मुझको इस का दी आज्ञा फरमाय जी ।। ७ ।।

इक दिन नृप ने शयनागार में देखा जबर अन्याय ।
दास पास में सोती राणी बेसुध शर्म गमाय जी ।। ८ ।।

अभी करूँ टुकड़े दोनों के दूँ परभव पहुँचाय ।
मंत्री को बुलवाकर घटना दूँ प्रत्यक्ष बताय जी ।। ९ ।।

मंत्री को राजा यों बोला यमपुर दूँ पहुँचाय ।
क्या गुँजाइश है अब इसमें दो मुझको समझाय जी ।। १० ।।

मंत्री बोला निर्णय करके फिर दोषी ठहरावें ।
नहीं तो बिन दोषी ये दोनों नाहक मारे जावे जी ।। ११ ।।

अभी करूँ इंसाफ देख लो छिप करके महिपाल ।
सत्य झूँठ का निर्णय करके सभी दिखादूं हाल जी ।। १२ ।।

सूई को ले मंत्री हाथ में पलंग नीचे जाय ।
लगा चुभाने महाराणी के खुली नींद घबराय जी ।। १३ ।।

कहे नाथ ? क्या हुआ आज में पा रही दुःख अपार ।
चुभे सूइयां सारे तन में, करो मेरी संभार जी ।। १४ ।।

नींद खुली नौकर यों बोला, क्षमा करो हे मात ।
गुनाह हुआ है मुझसे भारी चरण नमी कहे बात जी ।। १५ ।।

अरे हरामी ! यहाँ कैसे तूं सोया है बदजात ।
अभी तुम्हारी भूप सामने कह दूँगी सब बात जी ।। १६ ।।

गुनाह हो गया माता मुझसे माफ करो तकसीर ।
मृत्यु दण्ड से मुझे बचा दो कहे नयन भर नीर जी ।। १७ ।।

बिस्तर करके मैंने सोचा कैसा है सुखमाल ।
सोते ही शैय्या पर मुझको आई नींद तत्काल जी ।। १८ ।।

हे माता ! नहीं ध्यान रहा है किंचित भी इस बार ।
मारो चाहे तारो आपका मैं हूँ तावेदार जी ।। १९ ।।

हे कम्बख्त ? अभी महराजा आते महल के माँय ।
क्या गति होती तेरी मेरी दे मुझको बतलाय जी ।। २० ।।

मैं भी सो गई यही सोचकर सोते हैं महाराय ।
मुझे पता क्या तू सोता है पहले यहां पर आय जी ।। २१ ।।

बस-बस होजा सद्य रवाना जो तू मुक्ति च्हाय ।
चरण नमी वह चला वहाँ से राणी के गुण गाय जी ।। २२ ।।

देख हकीकत सारी भूपति मन में अचरज लाया ।
मंत्री कही सो बात ठीक है निर्णय सच कहलाया जी ।। २३ ।।

बुला मंत्री को सभा बीच में दो लाखों शाबास।
क्रोड़ों का धन देकर उसका उच्च किया आवास जी ।। २४ ।।

नृप बोला मंत्री कहने से इज्जत रही इस वार।
दो हत्या हो जाती नाहक देते लोग धिक्कार जी ।। २५ ।।

प्राज्ञ प्रसादे 'सोहन मुनि' कहे करो मती विश्वास।
निर्णय बिना, सुनी देखी भी मिथ्या होवे खास जी ।। २६ ।।

९ २ ० २
तत्व नेत्र खे भुजा साल में ब्यावर सेखे काल। (२०२९ की साल में)
मृगसर शुक्ला तिथि पंचमी जोड़ करी रविवार जी ।। २७ ।।



१३

बेटा मेरा नमक है बहु जो मिर्ची लाल

(तर्ज : राधेश्याम रामायण)

एक स्थान में बैठी केई वृद्धा मिलकर बात करे ।
कोई धर्म साधना करती कोई ईश्वर ध्यान धरे ।। १ ।।
कोई बैठी गपशप करके अपना समय निकाल रही ।
कोई - कोई अपने- २ घर धन्धे की बात कही ।। २ ।।
वृद्धा एक अन्य को अपनी, बाते मुख से सुना रही ।
क्या बतलाऊँ बहु की हालत मैं तो अति अकुलाय रही ।। ३ ।।
बेटा भी लाकर के पैसा सारे उसको सौंप रहा ।
जब थोड़ी सी बात कहूँ तो लड़ने को तैयार खड़ा ।। ४ ।।
मानो मैं तो घर में कुछ भी लायक हा ! अब रही नहीं ।
बेटा बहु तो एक हो गयी हाल कहूं क्या सही - सही ।। ५ ।।
कहे दूसरी सच कहती है मेरा भी कुछ सुनलो हाल ।
पति साथ में जावे पत्नि रोज घूमने पिक्चर हॉल ।। ६ ।।
शृंगार बनाने में ही बहू तो देती पुरा पहर निकाल ।
कहाँ समय है उसको घर में जो कि बनावे रोटी दाल ।। ७ ।।
जाकर खुद बाजार बीच में साड़ी लहंगा लाती है ।
बूढ़ों के भी आगे बोले जरा नहीं शरमाती है ।। ८ ।।
बदल गया है समय आज तो कलयुग जग में छाया है ।
मात पिता की सेवा तज के सास सुसर मन भाया है ।। ९ ।।
नारी की इच्छा अनुसारे, सब कुछ घर में चलता है ।
इसीलिए तो बड़े जनों के हिरदय मांही खलता है ।। १० ।।
कहे तीसरी मेरा बेटा और बहू आनन्दकारी ।
समय- २ पर सेवा करके लेते मेरी शुध सारी ।। ११ ।।
चौथी बोली नहीं हैं संभव ऐसे होवे पुत्र बहू ।
अपने ढंग से चलते हैं सब देख रही हूँ जगत सहू ।। १२ ।।

पुनः तीसरी बोलो जग में अपने- २ अलग विचार।
अच्छा लगता मुझे सर्वदा अपना ही सुन्दर परिवार ।। १३ ।।
मेरी लड़की लगती मुझको मानो है शक्कर जैसी।
गुड़ मानिन्द जंवाई लगते शोभा बतलाऊँ कैसी ।। १४ ।।
नमक तुल्य है मेरा बेटा लाल मिरच सम बहू मानो।
क्या कहूँ आगे अपनी तुमको सारा हाल यह सच जानो ।। १५ ।।
अन्दर बहू ने सासुजी के शब्द सुन लिये ये सारे।
इतना प्यार दिखाती घर में बाहर अवगुण उच्चारे । १६ ।।
इससे दिल में रोष छा गया चेहरा हो गया उसका लाल।
पति ने घर में आकर देखा आज नार तो है बेहाल ।। १७ ।।
पूछा पति ने क्या कारण है क्यों इतनी हो आज मलाल।
यहां प्यार और बाहर बुराई करती सासू है यह हाल ।। १८ ।।
पति कहे माँ से पूछूँगा किस कारण से बात कही।
माँ के आगे आकर उसने कही बात जो सुनी सही ।। १९ ।।
माता कहती सत्य कही मैं नहीं बुराई कीनी है।
मैंने अपनी बात सुनाकर उनको शिक्षा दीनी हैं ।। २० ।।
बेटी है श्वसुरालय की वो यदा कदा ही आती है।
इसी लिए ही हमको मीठी शक्कर जैसी भाती है ।। १२ ।।
रहे सदा यदि पीहर में तो आँखों में आ जाती है।
अतः जंवाई बाई को बस गुड़ शक्कर बतलाती है ।। २२ ।।
पर्वों पर मिष्ठान्न बनाते रोज कोई नहीं खाते हैं।
दाल भात है सबका भोजन इसको रोज बनाते हैं ।। २३ ।।
नमक मिरच बिन काम चले नहीं रोज काम में आते हैं।
नमक डालना भूल जाय तो खाना भी तज जाते हैं ।। २४ ।।
रोगी को यदि डाक्टर कुछ दिन कहे नमक का त्याग करो।
दबाव से तज दोगे फिर भी समय- २ पर याद करो ।। २५ ।।
घी शक्कर का त्याग करें पर नमक मिरच है प्रियकारी।
ये दोनों है जीवन साथी बात कही मैं खरी - खरी ।। २६ ।।

ऐसे मैं सबको तज दूं पर पुत्र - पुत्र वधु है प्यारे ।
अब तो समझा मेरी बात को भाव सुना दीने सारे ।। २७ ।।

सुनकर सारी बात मात की सुत ने मन में धारी है ।
सच्ची बात सुनाकर मुझको मन की शंका टारी है ।। २८ ।।

आकर कहता निज नारी को रहस्य समझ तू नहीं पाई ।
इसीलिए ही तेरे दिल में क्रोध गया गहरा छाई ।। २९ ।।

गुड़ शक्कर अरु नमक मिरच का सारा भेद बता दीना ।
नारी सुनकर उस ही क्षण जा सास चरण में सिर दीना ।। ३० ।।

मुझसे गलती हो गयी भारी उसको आप क्षमा करना ।
समझ सको ना आप बात को इससे इतना कह दीना ।। ३१ ।।

इसी तरह समझे बिन कोई वाद - विवाद बढ़ा देता ।
बार-२ वह पछताता है दुःख हिए में भर लेता ।। ३२ ।।

प्राज्ञ प्रसादे 'सोहन मुनि' कहे क्षमा हृदय में धारो जी ।
ज्ञान ध्यान में रमण करो और अपना संकट टारो जी ।। ३३ ।।



१५ तृष्णा बुरी बलाय

(तर्ज :- नेमजी की जान बणी.)

लोभ से दु:ख पावे संसार, तथापि तजे नहीं नर नार ।।टेर।।

नगर एक शालिग्राम नामी, वहाँ का शालम सिंह स्वामी ।
कोष में धन की नही खामी - दान दे शोभा ली पामी ।।
दोहा- उसी नगर में सेठ इक, मोतीलाल धनवान ।
व्यापार मांही अति दक्ष है, अच्छी चले दुकान ।।
दिनों दिन बढ़ता है रूजगार ।।लोभ.।।१।।

एक दिन जहाजों को भरकर, चला है सरिता पति अन्दर ।
गये कुछ जहाज दूरी पर,- तूफाँ से पोत हिले सत्वर ।।
दोहा- सारे जन घबरा गये, मोती सेठ दुःख पाय ।
अब तो सारे डूब जायेंगे, हाहाकार मचाय ।।
उपाय नहीं दीख रहा उस वार ।।लोभ.।।२।।

सेठ वहाँ आर्तध्यान ध्यावे, दु:ख में प्रभू याद आवे ।
मनौती मन मांही लावे, करो मुझ रक्षा दरसावे ।।
दोहा- अगर यहाँ बच जाऊँ तो, ब्रह्म भोज कराय ।
विप्र पाँच सौ जीमाकर, मैं देऊँ दक्षिणा ताँय ।।
भीति से कह रहा बारम्बार ।।लोभ.।।३।।

तूफाँ में शान्ति कुछ आई, सेठ मन भाव गये आई ।
ढ़ाई सौ दूंगा जीमाई, नहीं ! नहीं ! ! एक बहुत भाई ।।
दोहा- आयु बस से आ गया, सद्य उदधि के पार ।
जहाज रूकाकर शहर में, करता है व्यापार ।।
कमाई अच्छी की इस वार ।।लोभ।।४।।

जिमाऊँ एक विप्र आगार,- नहीं कुछ जल्दी है इस वार ।
करू मैं अभी यहां व्यापार, पुण्य से चलता है रूजगार ।।
दोहा- एक वर्ष तक रह वहाँ, पुन: देश में आय ।
अपने घर आने के बाद वह सोचे दिल के मांय ।।
मिले जो करता कम आहार ।।लोभ।।५।।

ब्राह्मण लख पास बुलवावे, भोजन की उसको दरसावे।
खुराक है कितनी बतलावे, सेर भर आटा मुझ चावे ॥
दोहा- इसके साथ में पाव भर सर्पिष[1] और सामान।
सुनकर सेठजी करे रवाना यह भी क्या इन्सान ॥
मानो है राक्षस का सरदार ॥लोभ॥६॥

विप्र को पूछे सेठ हर बार-खुराक हो उतनी दे उच्चार।
मिला एक विप्र बहुत होशियार, सेठ की समझा बात तत्कार ॥
दोहा- विप्र कहे सुनो सेठजी, आधा पाव है अन्न।
जीमाने का मन होवे तो, चाहे यह भोजन्न ॥
कृपण हो राजी कहे इस बार ॥लोभ॥७॥

मेरे घर आप सुबह आना, चाहे सो सामान ले लेना।
बनाकर यहीं आप खाना, बुलाये बिन ही आ जाना ॥
दोहा- हाँ भरकर के विप्र तो, गया है अपने स्थान।
सेठाणी से सेठ कहे यों दे देना सामान ॥
विप्र जो मांगे आटा दाल ॥लोभ॥८॥

सेठ के आया जरूरी काम, चला गया वहाँ से दूसरे ग्राम।
सुबह आ विप्र सेठ के धाम, सुनादी अपनी बात तमाम ॥
दोहा- सेठाणी कहे चाहिये उतना लो सामान।
विप्र सोचकर बोला जल्दी दे दो अब यजमान ॥
लिस्ट में लाया सर्व उतार ॥लोभ॥९॥

आटा मण दस लाकर दीजे, पीपा दो घृत मंगवा लीजे।
लिस्ट में लिखा काम कीजे, सामान अब जल्दी दे दीजे ॥
दोहा- लिखे मुआफिक दे दिया, मिष्ठान्न किया तैयार।
बुला ब्राह्मणों को जीमाया दीना दान उस बार ॥
जीम सब विप्र गये आगार ॥लोभ॥१०॥

दूजे दिन सेठ स्थान आया, ढेर वहाँ पत्तल का पाया।
सेठ मन विस्मय अति लाया, कारण क्या जीमण करवाया ॥
दोहा- सेठाणी से आ कहे, यह क्या यहाँ का हाल।
जीमण की ये पडी पत्तले इतना क्या पंपाल ॥
लगा दिया कचरे का अम्बार ॥लोभ॥११॥

---

१. घृत

नार निज बात सुना दीनी, आपने जो आज्ञा कीनी।
ब्राह्मण को सामग्री दीनी, ऊपर से दक्षिणा लीनी ॥
दोहा- सुनी सेठ के चित्त में, हो गया दुःख अपार।
हजारों का खर्चा करवा, लीना मुझको मार ॥
अभी जा दूँ उसको फटकार ॥लोभ॥१२॥

कहा था आध पाव चावे, धोखा वह मुझसे कर जावे।
खर्च सब उनसे मांग लावे, सोच कर विप्र धाम जावे॥
दोहा- मालुम हो गया विप्र को, निज नारी बुलवाय।
सारी बात समझा कर उसको दीनी द्वार बिठाय ॥
रूदन कर रोक सेठ को द्वार ॥ लोभ ॥ १३ ॥

द्वार पर नार रोती पाई, सेठ कहे हुआ कहो कांई।
नार कहे देऊँ बतलाई, विप्र के शूल उदर मांही ॥
दोहा- जब से आये जीमकर, पड़े हुए बेहाल।
मानो हो गये मरण शरण वे, उठ गई मेरी ढाल ॥
करेगा कौन मेरी संभार ॥ लोभ. ॥ १४ ॥

अभी मैं राज्य मांहि जाऊँ, बुलाकर सन्तरी लाऊँ।
हाल सब उनको दरसाऊँ, सेठ अब तुमको पकड़ाऊँ ॥
दोहा- विष मिश्रित भोजन खिला, बुरा किया यह काम।
मेरे पति को मार दिया, होगें आप बदनाम ॥
सेठ सुन करने लगा विचार ॥लोभ॥ १५ ॥

फरियाद यदि राज मांही जावे, सन्तरी मुझको ले जावे।
सजा में कठोर कैद पावे, दुःख में मेरे दिन जावे ॥
दोहा- इससे अच्छा है यही, यहाँ इसे समझाय।
कुछ दे कर के पिण्ड छुड़ाऊँ, ऐसी मन में लाय ॥
नम्र हो दीने शब्द उच्चार ॥लोभ.॥ १६ ॥

असर्फी सौ मुझसे लीजे, आगे को पैर मती दीजे।
कृपा कर बात मान लीजे, कहूँ सो ध्यान जरा दीजे ॥
दोहा- विप्राणी कहे सेठ जी, मुझ जीवन दुखकार।
इनसे तो कुछ काम बने नहीं, मानूँ नहीं इसवार ॥
जाऊंगी मैं तो अब दरबार ॥लोभ॥ १७ ॥

सेठ जी घबरा दरसावे, मांग लो जो मन में चावे।
किन्तु मत राज मांहि जावे, इज्जत यहाँ मेरी रह जावे।।
दोहा- विप्राणी कहे बोल कर, सुन लो ध्यान लगाय।
जीवन भर का खर्चा चावे, मेरे नहीं कोई आय।।
पाँच सौ ले आवो दीनार ।।लोभ।। १८ ।।

सेठ ने चुपके ला दीनी, बात वह और नहीं कीनी।
विप्राणी झट से ले लीनी, सेठ को सद्य सीख दीनी।।
दोहा- ऐसे ही धन कृपण का, होता है बरबाद।
रोकर बैठा निज घर माँही, करे न पैसा याद।।
होती यह दशा सुनो नरनार ।।लोभ।। १८ ।।

मिले हुए धन से लाभ लेना, चाहे जहाँ दान नित्य देना।
कृपण बन अपयश मत पाना, एक दिन सब धन तज जाना।।
दोहा- आँख मीची धन पर नहीं, रहे कुछ भी अधिकार।
अतः समझ कर दिल में धरना, शिक्षा यह हितकार।।
'सोहन मुनि' चेतावे हरबार ।।लोभ।। २० ।।

अर्थ पा लाभ जो लेवे, अमर वह नाम कर देवे।
कृपण बन लक्ष्मी को सेवे, अन्त में रोता ही रहवे।।
दोहा- दो हजार नव तीस का पोस मास सुखकार।
लाल भवन जयपुर के मांही जोड़ करी तैयार।।
भव्य जन लेगा इनसे सार ।।लोभ।। २१ ।।

—

१५ | सत्संग महिमा

(तर्ज : खड़ी लावणी)

करो सदा सत्संग जिन्हों से शुद्ध भावना वन जावे।
तज कुमार्ग को दुष्ट पुरुष भी सन्मारग पर लग जावे ।।टेर।।

'रत्नपुरी' में 'रत्नसेन' नृप 'रत्ना' राणी है विख्यात।
सदा भावना उन्नत रखती, पालन करती दीन अनाथ ।।

उसी नगर में सेठ 'यशोधर', धन धारी है उत्तम जात।
यशोमती नारी है जिनके, पतिव्रता जग में प्रख्यात ।।

शेर— सेठ के एक पुत्र पालक, प्यार जिस पर पूर जी।
दास दासी संग रहते नहीं जाते दूर जी ।।

वाल वय में कंवर के आदत लगी इक क्रूर जी।
तस्करी के काम में वह हो गया है शूर जी ।।

छोटी कड़ी—जब चोरी की यह बात सेठ ने जानी।
सोचे यों फैले बात रहे नहीं छानी ।।
ऐसा करूँ मैं काम, तजे हित मानी।
टल जावे वदनाम वने जिन्दगानी ।।
एकान्त स्थान में सोच रहा मम,
संकट कैसे विरलावे ।।तज० १।।

इतने में वहाँ आये सन्त सुन, सेठ गया है उनके पास।
लेकर संग में पालक पुत्र को, कही वात जो दिल की खास ।।

सुनकर बोले सन्त-समागम, काटेगा सव दुख की रास।
छूटेगा यह बुरी वात से, रक्खो मन में पूरी आश ।।

शेर— सत्संग में पालक कंवर वैठा है सन्मुख आय जी।
श्रवण करता ध्यान से, दुष्कर्म है दुखदाय जी ।।

दुर्गतिक में आतमा जा, कष्ट पूरा पाय जी।
अत एव तज दो पाप को नरभव मिला सुखदाय जी ।।

छोटी कड़ी—यह सुनकर पालक दिल में अति भय लाया।
कभी नहीं हो पाप हृदय कम्पाया।
इक दिवस राज में नट ने आ दरसाया।
मैं खेल दिखाऊँ इन्तजाम करो राया।
विन देखे ना रहे कोई भी भूप घोषणा करवावे।तज०२।
पालक भी वहाँ आया देखने खेल देखते मन आई।
ले जाऊँ मैं वस्तु कीमती राज-भवन से उचकाई।।
रत्न जड़ित चीजें ली कर में किन्तु भावना यों आई।
इसका फल होगा दुखदायी भोगूँ नरकों में जाई।।
शेर— हाथ में ले वस्तुएँ, इत उत रखो ले नाँय जी।
पाप का फल आतमा, भोगे सदा दुखदाय जी।।
सत्संग की वातें वहां पर, याद में जब आय जी।
छोड़कर के चल दिया नहीं एक वस्तु लाय जी।।
छोटी कड़ी—प्रातः काल जब भूपति शैय्या त्यागी,
इधर-उधर लख चीजें शंका जागी।
आया निश्चय चोर चोरी का रागी,
विन लिये गया क्यों क्या मन समता जागी।
सारे नगर में करा घोषणा, नरपति ऐसे कहलावे।तज०३।
जो भी आया राज भवन में तस्कर हाजिर हो जावे।
सभी गुनाह है माफ उसे यों नरपति आज्ञा फरमावे।।
सुनी घोषणा पालक सत्वर राज सभा में चल आवे।
खड़ा हुआ यों सभा वीच में सत्य-सत्य सब दरसावे।।
शेर— रात में आया यहाँ पर माल लेने काज जी।
सत्संग के सदभाव से आई मुझे वहाँ लाज जी।।
तत्क्षण तजा सब माल को समझा लिया मन आज जी।
घटना घटी वैसी सभी कह दी सुनो महाराज जी।।
छोटी कड़ी—सुन वात हृदय में भूपति आनन्द पाया,
निज पुत्री परणा राज जँवाई बनाया।
सत्संग की महिमा फैली जन हरषाया,
प्राज्ञ प्रसादे 'सोहन मुनि' रच गाया।।
दो हजार चोवीस चौमासा, गुलाबपुरा में सुख पावे।।तज० ४।।

———

१६ | धम्म सारहीणं

दोहा- शासन के नायक प्रभु - तीर्थंकर भगवान ।
चरण शरण जिसने ग्रही, पाया पद निर्वाण ॥

(तर्जः- हो भवियण मंगलिक शरणा चार)

श्रोता सांभलो, हो भवियण - लो जिनवाणी धार ।
जिण सूं भव चक्कर मिटे-हो,
भविखण-हो जावे उद्धार के" ॥टेर॥

तेजपुरी नगरी भली-हो भवियण-त्रिखण्ड में विख्यात ।
सुर सुरेन्द्र मन मोहनी-हो भवियण
मघवा नित गुण गात के"श्रोता.१ ॥

तिण नगरी को सार्थवाह-हो भवियण- है अनाथ प्रतिपाल ।
दौलत को नहीं पार है-हो भवियण
शरणागत रखवाल के" ॥श्रोता. २॥

एक समय हुई भावना-हो भवियण-जाऊँ शिवपुर शहर ।
सभी जनों को साथ ले-हो भवियण
लेवे वहाँ की लहर 'के' ॥ श्रोता. ३॥

नगर ढ़िंढोरो फेरियो - हो भवियण चलो हमारी लार ।
आनंद का वह स्थान है-हो भवियण
नहि दुख का संचार 'के' ॥श्रोता. ४॥

सुनी घोषणा आगये-हो भवियण-मिली सकल परिवार ।
कर जोड़ी अर्जी करे-हो भवियण-
हम सब हैं तैयार "के" ॥श्रोता. ५॥

सार्थवाह तब इम कहे - हो भवियण सुनलो दे सब ध्यान ।
मार्ग भयंकर है सही हो भवियण-
रहिज्यो संयमवान 'के' ॥श्रोता. ६॥

भीमा अटवी आवसी, हो भवियण-तसु बीच उपवन एक ।
उसकी सुन्दरता लखी हो भवियण-
खो गये यदि विवेक 'के' ॥श्रोता ७॥

फल किंपाक लख चित्त में-हो भवियण, खाने की हो चाह।
फल कड़वा वह भोगवे-हो भवियण-
दुख रो नहीं है थाह 'के' ।।श्रोता. ८।।

जिह्वा वश कर चालज्यो-हो भवियण-संयम रखज्यो पूर।
लखज्यो मत थे वाटिका-हो भवियण-
रहिज्यो उस से दूर 'के' ।।श्रोता, ९।।

आगे जाते ही मिले-हो भवियण-शिवपुर शहर महान्।
अनन्त सुख का स्थान है-हो भवियण-
करो सदा आराम 'के' ।।श्रोता. १०।।

जिसने शिक्षा धारली-हो भवियण-वह तो हो गया पार।
सुन्दरता लख फंस गया-हो भवियण-
पाया कष्ट अपार 'के' ।।श्रोता. ११।।

यह दृष्टांत सुना कहूँ-हो भवियण-भाव रूप जो सार।
आलस निद्रा त्याग ने-हो भवियण-
सुनो सभी नर नार 'के' ।।श्रोता. १२।।

सार्थपती अरिहन्त है-हो भवियण-चार संघ परिवार।
शिक्षा जिसने धारली-हो भवियण-
पार किया संसार 'के' ।।श्रोता. १३।।

यौवन-वय अटवी महा-हो भवियण-नार वाटिका जान।
काम वासना में फंसा-हो भवियण-
लिया नरक सामान 'के' ।।श्रोता. १४।।

समकित में सैंठा रहो-हो भवियण-करो सामायिक सार।
प्राज्ञ कृपा 'सोहन मुनि'-हो भवियण-
लेओ जन्म सुधार 'के' । श्रोता. १५।।

दो हजार पच्चीस के-हो भवियण-मृगसर महिना माँय।
छह ठाणों से थाँवला-हो भवियण-
विचरत-विचरत आय 'के' ।।श्रोता. १६।।

---

१७ | नर देह अनमोल है

दोहा- सुरनर मघवा नित नमें, चरण कमल में आय।
उन्हीं वीर के जाप से, सकल पाप टल जाय ॥

(तर्जः— लावणी खड़ी)

समझो मित्रों ! भौतिक सुख में, जीवन मत बरबाद करो।
मिला कीमती मानव तन यों, व्यर्थ गँवाते जरा डरो ॥ टेर ॥
बसन्तपुर में श्रमणोपासक, 'लक्ष्मीचन्द' था ध(धारी।
सद्‌गुण धारक पतिव्रता शुभ, लक्षण युत 'पुष्पा' नारी ॥
सुन्दर तन एक तनय 'पुरुष चन्द', मात पिता को प्रियकारी।
बाल्यकाल रहा बीत खुशी से, मोद मनाता हरबारी ॥
अभिभावक लख पुत्र दक्षता, समझें नन्दन है सखरो ॥मिला.१॥

एक समय दम्पति आनन्द सेः सोते थे निज मँझार।
काल अचानक आकर देखो, उठा लिया दोनों को लार ॥
सदा सहायक थे बच्चों के, किन्तु गये तज, नहि आधार।
और सहारा नहीं रहा जो, आकर पूँछे सार संभार ॥
निः सहाय हो गया पुरुषचन्द,कर्म जोर जग में जबरो ॥मिला.२॥

हाट हवेली पूँजी सारी, जिनके हाथ में जो आया।
वही समझ बालक को भोला, मन माने ढंग से खाया ॥
सगे सम्बन्धी सभी स्वार्थ के, कभी नहीं आ बतलाया।
दीन हीन हो गया वस्तुतः विद्युत सम है यह माया ॥
कभी खाय वह पूरी रोटी, कभी भूख में दिन सगरो ॥मिला.३॥

एक समय एक दानी जन की, इसके ऊपर नजर परी।
होनहार लख पुरुष चन्द को, बात कही यों खरी खरी ॥
पढ़ो लिखो जा शाला मांहीं, खर्च व्यवस्था सभी करी।
चन्द समय में चतुर हो गया, कला सभी दिल मांही धरी ॥
सुन्दर कन्या संग विवाह कर, माने मन आनन्द खरो ॥मिला.४॥

श्वसुरालय से ले निज नारी, वापिस निज घर पर आया।
एक सम्बन्धी भेज निमन्त्रण, महोत्सव माँही बुलवाया ॥
नारी से जब कही बात तब, उसने ऐसे बतलाया।
नहीं गले में हार अतः मैं नहीं चलूँगी समझाया ॥
पति कहे मैं अभी हार ला दे दूँ दिल सन्तोष करो ॥मिला.५॥

पति पुरुष चन्द मित्र पास जा, कह दी मुझको चाहे हार ।
उस ही क्षण दे दिया मित्र ने, नहीं लगाई कुछ भी बार ।।
हर्षित होकर घर पर लाया, पहनाया पत्नी को हार ।
चले दम्पती बड़ी खुशी से, शामिल हो गये भोज मँझार ।।
मिले सम्बन्धी खुशी-खुशी हो, आपस में कीनो मुजरो ।।मिला.६।।

दिन भर रह कर वापिस दम्पति, ले आज्ञा आये आगार ।
कहा पति ने दे दो हार तब, भौंचक्की हो बोली नार ।।
कहीं गिर गया हार गले से, सुनकर होश उड़े उस वार ।
दम्पति सोचे कैसे उनको, लाकर देगें वैसा हार ।।
नहीं पास में साधन कुछ भी, संकट केम मिटे सगरो ।।मिला.७।।

करे परस्पर बात दम्पति, हिम्मत रखकर देगें हार ।
गये जौहरी दुकान देख, उसी ढंग का वहाँ पर हार ।।
कीमत पूछकर पता लगाया, लगती इसकी लक्ष दीनार ।
सुनकर सोचे नहीं दीनारें, गहरा दिल में हुआ विचार ।।
हम दोनों को रखलो सेठ जी, बदले कितने वर्ष भरो ।।मिला ८।।

बोला जौहरी साठ वर्ष तक, करना होगा यहाँ का काम ।
बात मानकर लिया हार को, दिया मित्र के जा कर धाम ।।
सेवा में नित रहे दम्पति, करते वहाँ का काम तमाम ।
लूखा सूखा जैसा मिलता, माने उसमें ही आराम ।।
साठ वर्ष जब वहीं बिताये, देह हुओ जर्जर सगरो ।।मिला.९।।

एक दिवस जब मिला मित्र तब, बात कहीं निज की सारी ।
सुनकर मित्र यों कहे मित्र से, क्यों खोई ऊमर भारी ।।
वह तो था कलचर मोती का क्यों बदले में देह हारी ।
पहले पूछते आप मुझे तो समझाता मैं स्थिति सारी ।।
सुनकर दोनों चिन्तित हो गये, व्यर्थ गयो जीवन सगरो ।।मिला.१०।।

अब पछताए क्या होता है, भोग-हार में देह हारी ।
सद्गुरू की यदि शिक्षा धारता, देता सब झंझट टारी ।।
सुनी कथा मत खोवो आयुष, तजो काम सब संसारी ।
प्राज्ञ प्रसादे 'सोहन मुनि' कहे, ले लो धर्म पूंजी सारी ।।
कलचर भोगों में मत उलझो जीवन समझो अब निजरो ।।मिला.११।।

---

१८ | माया मृषावाद

(सर्ज—छोटी लावणी)

गुरुदेव कहे हितकारी सुनलो प्यारे,
माया - मृषा सम पाप नहीं जग सारे ।।टेर।।
हेमपुरी में हेमा शाह ऋद्धि शाली,
है नार गुणावली चाले चाल मराली ।।
स्थान - स्थान पर हाठ सेठ की चाली,
सब जगह पुण्य से बढ़ रही लक्ष्मी लाली ।।
दोहा- एक समय गये सेठ जी, सहल करन वन माँय ।
अश्व घुमाते गिर पड़े, अंग भंग हो जाय ।।
ईलाज कराने वैद्य बुलावे वहाँ रे ।। माया. १ ।।

इक आँख, हाथ और पाँव, काम नहीं करता,
कर लीनी दवाएँ खूब वैद्य जो कहता ।
भक्ति करती नार, काम नहीं रूकता,
नौकर चाकर भी हुक्म मुजब सब करता ।।
दोहा- सेवा भावी नार का, हुआ अचानक काल ।
वज्र पात सम दुःख से, सेठ हुआ बेहाल ।।
मित्र सम्बन्धी देते तसल्ली आ रे ।। माया. २ ।।

एक समय मित्र मिल बातें यों दरसावे,
तुम करो पुनर्विवाह चाहे धन जावे ।
एक कहे नहीं कोई, वृद्ध परणावे,
कहे दूसरा धन दे इज्जत जावे ।।
दोहा- मित्र तीसरा यों कहें, परणाऊँ बिन दाम ।
धन्यवाद देना तभी, कहना चतुर सुजान ।।
मंझधार फँसी नौका को कौन उवारे ।। माया. ३ ।।

गया तीसरा मित्र गांव के मांही,
वहाँ मिला सेठ एक अपनी बात सुनाई ।
मैं दुःखी हो गया बड़ी हो गई बाई,
कोई देवो मुझको सुंदर वर बतलाई ।।

दोहा- मेरे मित्र है सेठ जी, लक्ष्मी का नहीं पार।
क्या बतलाऊँ हाल मैं, दिल के बड़े उदार ।।
काम नाम और आयु बताओ सारे ।। माया. ४ ।।

धन इतना है कि चार स्कन्ध पर चलता,
दानी भी पूरा एक हाथ से करता।
समदर्शी सबको एक दृष्टि से लखता,
उन्नीस, बीस, इक्कीस आयु सब कहता ।।

दोहा- सुनकर सत्वर सेठ ने, हाँ भरली उस वार।
विवाह तिथी निर्णय करी, बुला लिये निज द्वार ।।
चले परणवा शाहजी चढ़ उस वारे ।। माया. ५ ।।

देख बींद को सेठ जी विस्मय पाया,
वह कहाँ युवक, यह बूढ़ा कैसे आया।
जा पकड़ा उसको क्यों बूढ़ा वर लाया,
वह बोला जिसकी कही उसे ही लाया ।।

दोहा- आँख, हाथ अरू पांव से, यह अपंग दिखलाय।
मिथ्या करके बात तुम - दीना मुझे भरमाय ।।
माया मृषा कह कन्या कूप में डारे ।। माया. ६ ।।

वह बोला सुनलो सच्ची वात सुनाई,
यह चलता चार के स्कंध झूठ रति नाहीं।
आयु उगणीस, वीस, इक्कीस बताई,
है एक हाथ और एक आँख दरसाई ।।

दोहा- ऐसे धोखेबाज नर, बोले इसको सत्य।
पापोदय से नरक में रहना होगा नित्य ।।
देख व्यवस्था लोक सभी धिक्कारे ।। माया. ७ ।।

बिन परणे वापिस बूढा निज घर आया,
कुमित्रों की बात से अपना मान गवाँया।
ऐसा पाप जो, जो भी कर हरषाया,
यह अन्त समय में रो रोकर पछताया ।।

दोहा- माया मृषा के पाप से, बचो सभी नर नार।
प्राज्ञ कृपा "सोहन मुनि" चेतावे हर बार ।।
ज्ञानी जन तो ऐसे अघ को टारे ।। माया. ८ ।।

---

१९ | करूणालू नारद

(तर्ज—लावणी खड़ी)

करूणा जिसके दिल में होवे, वही समझ लो है पुण्यवान।
सम्यक्त्वी ही भविजीव है, जल्दी पावे मुक्ति स्थान ।।टेर।।

'शक्तिमती' नगरी का स्वामी, अभिचन्द्र है सद् गुण खान।
न्याय नीति अरू सदाचार से, प्रजागणों का श्रद्धा स्थान ।।
"बसू" कंवर है एक जिन्हों के, विनयवान पूरा गुणवान।
राजा-प्रजा सभी का इन पर, रहता हरदम पूरा ध्यान ।।
कंवर हुआ जब आठ वर्ष का भेजा शाला पाने ज्ञान ।।सम्यक्त्वी.२।।

उस नगरी का 'क्षीर कदम्बक; उपाध्याय है महा विद्वान।
कई जिन्होनें पढ़े शास्त्र और, दया धर्म का अच्छा ज्ञान ।।
कंवर वसू भी पढ़े वहीं पर, करे परिश्रम रखकर ध्यान।
क्षत्री वैश्य और विप्र पुत्र भी, लेने आते वहाँ पर ज्ञान ।।
अप्रमत्त हो उपाध्याय भी, देते हरदम विद्या दान ।।सम्यक्त्वी.२।।

उपाध्याय का सुत 'पर्वत' और 'नारद' विप्र भी करे अभ्यास।
राजपुत्र तीनों में मित्रता हो गई करते साथ निवास ।।
वे तीनों ही एक रात में सोते छत पर गुरु के पास।
उसी रात विद्याचारण मुनि जा रहे होकर के आकाश ।।
नीचे बालक सोते देखकर, ठहर वहीं यों किया बयान ।सम्यक्त्वी.३।

तीनों में से एक स्वर्ग में, दो नर्को मे जावेंगे।
निज करणी जो करी शुभाशुभ पर भव माँही पावेंगे ।।
बात श्रवण कर गुरु ने सोचा कैसे दुर्गति जावेंगे।
मेरे शिष्य होकर भी क्या ये दुर्गति कष्ट उठावेंगे ।।
ऐसा भी नहीं हो सकता है, मिथ्या होवे मुनि जवान।सम्यक्त्वी.४।।

सोचे मन में करू परीक्षा, जिससे हो जावे पहिचान।
आटे के मुर्गे बनवाकर तीनों को करना आव्हान ।।
एक-2 ले जाओ मुर्गा, हो एकान्त जहां पर स्थान।
कत्ल करो पर कोई न देखे इसका रखना पूरा ध्यान ।।
ले-ले मुर्गा तीनों ही वे चले जहाँ हो निर्जन स्थान ।। सम्यक्त्वी.५।।

पर्वत ने तो गांव बाहर जा वृक्ष ओट में दीना मार ।
बसु ने जाकर गिरी गुफा में किया कत्ल उसको तत्कार ।।
नारद फिरता-2 आया निर्जन वन को लख उस वार ।
अनुकम्पा आई यों दिल में कैसे इसको देऊं मार ।।
तभी ध्यान आया नारद को गुरुदेव का यह फरमान ।।सम्यक्त्वी.६।।

आते वक्त यह कहा मुझे, नहीं देखे वहाँ पर लेना प्राण ।
इस आज्ञा अनुसार कहीं भी मिला नहीं है मुझको स्थान ।।
समदर्शी सर्वज्ञ प्रभु का तीन लोक में फैला ज्ञान ।
और स्वयं मैं खुद ही देखूं कैसे लेलूं इसके प्राण ।।
आज मूक पंक्षी को मारो यह कैसे गुरुवर फरमान ।।सम्यक्त्वी.७।।

इतने में आ दोनों बोले हमने दीने मुर्गे मार ।
लख करके एकान्त स्थान को किया कत्ल उसको तत्कार ।।
सुनकर समझ गये गुरु दिल में यही नरक का खोलें द्वार ।
दयाहीन नर ही तो करते जन्म मरण को वारम्वार ।।
सत्य बात है मुनिवर की ये लेंगे दुर्गति का सामान ।।सम्यक्त्वी.८।।

कहाँ मिला एकान्त स्थान यहाँ गुरुदेव ने फरमाया ।
तब दोनों ने अपना-अपना सभी हाल कह बतलाया ।।
गुरु बोले सर्वज्ञ ज्ञान बिन रिक्त स्थान कहाँ पाया ।
और नहीं निज नयन देखते सभी कृत्य वहां पर भाया ।।
विविध भाँति से समझाया पर
जँची नहीं, दिल के दरम्यान ।।सम्यक्त्वी.९।।

नारद को निज पास बुलाकर उपाध्याय धन्यवाद दिया ।
सच्चाई को समझी तू ने कहे मुआफिक काम किया ।।
अपने दुःख सम समझे पर के उसका जानो सफल जिया ।
प्राज्ञ प्रसादे 'सोहन मुनि' कहे धन्य वही नर जन्म लिया ।।
अनुकम्पा हो जिसके दिल में
वह पावेगा, अमर विमान ।।सम्यक्त्वी.१०।।

---

२० | मुकाम पोस्ट आकाश

(तर्ज : खड़ी लावणी)

दोहा- श्री गुरु गौतम समरिये, वांछित फल दातार।
करी कृपा मुझ दास को, दीजे अक्षर चार ।।
लक्ष्मी पाकर गर्व करो मत, नहीं किसी के जाती लार, ।
संग जायेगी, उस नर के जो,
करता कर से पार उपकार ।। टेर ।।

बसंतपुरी नगरी के अन्दर, सेठ बसे 'गुण-सुन्दर' सार,
कमला वास करे है घर में, दूजो कमला' है घर नार ।
बिना पुत्र के सब फीके है, हुआ सेठ को यों जंजाल,
पुत्र मिले तो सम्पत्ति जावे, सभी सुनाया स्त्री को हाल ।

शेर:- चक्कर खाया भाग्य ने, लक्ष्मी हुई सब नाश जी ।
महल मन्दिर बिक गये, अब रहा न कुछ भी पास जी ।।
सेठाणी के गर्भ रहा, पर सेठ कर गया काल जी ।
पल में पलट गया रंग देखो, जगत का यह हाल जी ।।
सेठाणी यों सोचे दिल में,
अहो कर्म की गति करार ।। संग-१ ।।

प्रति पालन करके सेठाणी, कीने गर्भ के पूरण मास ।
सुन्दर बच्चा जन्म लिया है, लीनी उसने सुख की साँस ।।
भूल गई वह सभी दु:खों को, बांध रहो भावी की आस ।
लालन-पालन कर 'सूमेरू' को, भेज दिया पँडित के पास ।।

शेर:- कंवर भी आ बालकों में, करने लगा अभ्यास जी ।
हलवाई कहे ले लो मिठाई, लाया हूँ मैं खास जी ।।
छात्र जा लेवे मिठाई, खाय पा अवकाश जी ।
सोचे सुमेरू मैं भी लाऊँ, जा हलवाई पास जी ।।
आकर बोला जल्दी मुझको दे दो,
मिठाई दोना चार ।।संग. २ ।।

कहे हलवाई बिन पैसे यहाँ, मुफ्त मिठाई नहीं तुलती ।
अगर दाम हो ले लो यहाँ से, मांगे से यों नहीं मिलती ।।
सुनकर सोचे सुमेरू मन में, की मैंने भारी गलती ।
पैसे पास में नहीं है मेरे, इच्छा कहो कैसे फलती ।।
शेर:- पैसे ला निज मात से, खाऊँ मिठाई आज जी ।
घर पहुंच कर माँ से कहा, मेरा करो तुम काज जी ।।
पैसे दो खाऊँ मिठाई, नहीं और ईलाज जी ।
माता कहे नहीं पास पैसा, दूसरा नहीं साज जी ।।
पुत्र रुदन लख मात नयन से,
बहे अश्रु की अविरल धार ।।संग. ३ ।।

मात रुदन लख सुमेरू बोला, तू क्यों रोती है माता ।
नहीं पास में पैसे हैं तो, मैं अब कुछ भी नहीं चाहता ।।
मेरा साथी सदैव पैसे, लेकर शाला में आता ।
अतः आज मैं भी पैसे ले, वहाँ मिठाई को खाता ।।
शेर:- उनके पिता करते कमाई, तेरा पिता नहीं लाल जी ।
कहाँ गये हैं ? तात मेरे, मात कह दो हाल जी ।।
लेय फिर पैसे उन्हीं से, खाऊँ मिठाई माल जी ।
सोच तज दो बात कह दो, मिटे सभी जंजाल जी ।।
गद्गद् स्वर में माता बोली,
पता बताऊँ मैं इस बार ।।संग ४ ।।

व्योम तरफ संकेत किया है; पिता तुम्हारा उर्ध्व मंझार ।
समझ गया संकेत आपका, अब नहीं होगी देर लिगार ।।
त्वरित पत्र लिखने को बैठा, परम पिता परमेश्वर द्वार ।
खत देखत भेजो अब खर्चा, पैसे की हमको दरकार ।।
शेर:- मिले पिता परमेश को, है मुकाम पोस्ट आकाश जी ।
डालने को पत्र आया, लेटर बॉक्स के पास जी ।।
हाथ नहीं पहुँचा वहाँ तक सेठ आया खास जी ।
देखकर झट छोड़ बग्गी आया बालक पास जी ।।
देख सेठ को कंवर पास में,
मिष्ट वचन यों दिया उच्चार ।।संग ५ ।।

कितने हैं अज्ञानी जन जो, नहीं हिये में किया विचार।
इतना ऊँचा लटकाया है तंग हो गया हाथ पसार ।।
छोटे -२ बच्चे लिखकर, भेजे पत्र पिता परिवार।
समाचार यदि जल्दी के हो दुःख पावे वह अपरम्पार ।।
शेरः- सुन सेठ बोला दीजिये मैं डाल दूं इस माँय जी।
पत्र बालक ने दिया, तब सेठ यों समझाय जी ।।
तुम कहो तो देख लूँ, मैं खोलकर इस तांयजी।
देख लो बालक कहे, नहीं गुप्त यह दरसाय जी ।।
सेठ देखकर चकित हो गया,
किसने दीना पता उतार ।।संग ६ ।।

सुलभ भाव यों बालक बोला, खर्चा अब मेरे चावे।
माता से जब पूछा मैंने पता यही वह दरसावे ।।
सारी बातें सुनी सेठ कहे, जो खर्चा तुमको चावे।
मेरे पास से ले लेना तुम, पिता रकम यहाँ पर आवे ।।
शेरः- बिठा बग्घी में उसे ले सेठ आया लार जी।
देख लूँ इनकी सभी मैं जा दशा इस बार जी ।।
लेय बच्चा साथ में आया है अपने द्वार जी।
देखते ही दंग रह गया छूटी अश्रु धार जी ।।
नहीं करी संभाल यहाँ आ है,
मुझ को लाखों धिक्कार ।।संग ७ ।।

देख सेठ को माता ने तब मन में कई संकल्प किया।
किन्तु सेठ ने बहिन बनाकर, दिल का संशय मिटा दिया ।।
करके आग्रह घर ले आया, सभी वहाँ प्रबन्ध किया।
पढ़ा लिखाकर बना आप सम वापिस घर पहुँचाय दिया ।।
शेरः-धन्य है ऐसे ही दानी, नाम जग में पाय जी।
करते सफल जीवन वही, धन दान मांहि लगायजी ।।
लक्ष्मीपति सुन चेतियो, नहीं साथ में यह जाय जी।
'प्राज्ञ कृपा 'सोहन मुनि' यों, बार - बार चेताय जी ।।
साधर्मी वात्सल्य भाव से, ले लो श्री पाने सार ।।संग. ८ ।।

—✻—

२१ | भ्रष्टाचार : ले डूबा परिवार

दोहा- अपरिग्रह व्रत ग्रहो - वीर प्रभू फरमान ।
शिक्षा जीवन में लहें-होवे सुखी महान् ॥ १ ॥
लालच वश हो फंस गया, भ्रष्टाचार के मांय ।
उसकी गति सुन लीजिए, कैसे वह दुःख पाय ॥ २ ॥

(तर्ज :- राधेश्याम रामायण की)

पाप कार्य कर यदि कोई भी, कर लेता है मन को मिष्ट ।
आखिर फल पावेगा निश्चय, करने वाला महा अनिष्ट ॥१॥

कथा कहूँ मैं सुनो ध्यान से, कैसे किसने फल पाया ।
भ्रष्टाचार करते नहीं सोचा, अन्त समय वह पछताया ॥२॥

पागल को ला अस्पताल में, डाक्टर गण को वतलाया ।
फाँसी पर लटका दो मुझको यह वकता यों जतलाया ॥३॥

मैं खूनी हूँ, हत्यारा हूँ, सित्तर नर मैंने मारे ।
इसीलिए मत दया करो यह वार-वार यों उच्चारे ॥४॥

दोहा- अधम पातकी मैं महा, कीना घोर अनर्थ ।
वस - वस इसमें एक है, समझो दिल में अर्थ ॥३॥

कहता हैं वह ऑवरसियर यों स्कूल छोड़ घर पर आया ।
विवाह हुआ और मिली नौकरी, अच्छा स्थान मैंने पाया ॥५॥

कई कार्य आते थे सन्मुख, खाता रिश्वत भर कर पेट ।
कर जोड़ हमेशा नारी कहती, विगड़ जायेगी इस से पेठ ॥६॥

वेतन में सन्तोष करो, नहीं ज्यादा अच्छा भ्रष्टाचार ।
सबको छोड़ यहाँ से हमको, जाना है यह करो विचार ॥७॥

वार-वार मैं उसको कहता जग में ऊँचा सबसे अर्थ ।
दुनियाँ सारी उसे मानती चाहे जितना करे अनर्थ ॥८॥

दोहा- कोठी, बंगले साथ में, अम्वेसडर हो कार ।
ऊँचा उस नर को यहाँ माने सव संसार ॥

नारी फिर भी हितकारी हो, ऐसी पुस्तकें देती थी।
पढ़ो विचारो दिल के अन्दर, बार-बार यों कहती थी ॥९॥
पर मैं कहता अभी वक्त नहीं, मुझे पुस्तकें पढ़ने का।
अभी पास की सरिता ऊपर, पुल का काम चलाने का ॥१०॥
उसमें गहरी रिश्वत खाकर, काम कराया है कच्चा।
चन्द समय पश्चात् उसी का, उद्घाटन कीना अच्छा ॥११॥
पहली ही वर्षा में पानी, आया इतनें जोरों का।
कुदरत करती न्याय, पलटता भाग्य जो रिश्वत-खोरों का ।१२।

दोहा- अन्याय अनीति का यहाँ, होता भण्डाफोड़।
बदला आये पाप का, कहाँ जायेगा छोड़ ॥

उस समय वहाँ पर बस आई, बैठे थे सित्तर नर नारी।
आते ही पुल टूट गया और पड़ी नदी में वह लारी ॥१३॥
उस लारी में आये थे इनके ही बच्चे और नारी।
किसी व्यक्ति ने आ बतलायी घटना जो बीती सारी ॥१४॥
ऑवरसियर सुन पागल हो गया, बकता यों सबके आगे।
भ्रष्टाचार से नष्ट हुआ मैं, करणी का फल यह लागे ॥१५॥
अत: पाप से डरो मित्रवर, ! नरभव सफल बनाना है।
प्राज्ञ प्रसादे "सोहन मुनि" का बार-बार चेताना है ॥१६॥

दोहा- * रस[६]-नयन[२] द्यू[०]-नयन[२] का, ज्येष्ठ मास रविवार।
शुक्ला दूज 'भिणाय' में, वरते मंगलाचार ॥

---

* विक्रम सम्वत् २०२६

—*—

२२ | तेरा कौन सहाय

(तर्ज :- खड़ी लावणी)

सम्पत्ति और सन्तान नहीं है, अपनी क्यों गर्वाता है।
सुकृत सेवा में आ जावे, वह अपना कहलाता है ।। टेर ।।

मधुपुर नामी शहर जहाँ पर, नरपति नरसिंह नामी है।
सप्तगुणों का धारक शासक, न्याय नीति गुण धामी है ।।

उसी शहर में सेठ एक, जिनदास कोटिपति रहता है।
दीन, अनाथ, दुःखी अपंग की, सेवा कर हरसाता है ।।

शेर- सेठ का है नाम जाहिर, जाने सभी नर नार जी।
कोई न जाता द्वार पे आ, खाली हाथ पसार जी ।।

राज में जरूरत पड़े - तब, लेवे रकम उधार जी।
बाजार में भी द्रव्य चाहे, सो ले करे रुजगार जी ।।
सदा सेठ का खुला खजाना, चाहे सो ले जाता है ।। सुकृत १. ।।

सभी गुणों से युक्त सेठ के, सेठाणी 'गुण भद्रा' जान।
चार पुत्र है 'मान' 'शान' अरू तीजा चौथा "दान" "सुजान" ।।
चारों का कर विवाह सेठ ने, अलग-अलग संभलाया काम।
अच्छी तरह व्यापार करो तुम जिससे होगा जग में नाम ।।

शेर- एक दिन मिलने गया है सेठ, भूपति पास जी।
बात करते भूप दिल में आ गया परिहास जी ।।

सेठ ! कितनी आपके सन्तान, संपति खास जी।
सच्ची बता दो बात दिल की हो मुझे विश्वास जी ।।
आज भूप के क्या दिल आई, ऐसी बात सुनाता है ।।सुकृत:२।।

आज सत्य मैं बात कहूँ हे राजन् ! सुनलो देकर ध्यान।
डेढ़ पुत्र, दस लाख रुपये हैं मेरी लो सच्ची मान ।।
भूप कहे क्यों मिथ्या बोलो, कोटिपति हो चार जवान।
सभा बीच में ऐसा कहते, खराब होती अपनी शान ।।

शेर- सेठ कहे सच्ची कहूँ, यदि हो नहीं विश्वास जी।
करके परीक्षा देख लें, जम जाय दिल में खास जी ॥
प्रथम लड़का मान है, वह मिले वैश्या वास जी।
जाकर कहो यों सेठ मर रहा, एक तेरी आस जी ॥
भेज सन्तरी कहलाया तब कंवर उसे दरसाते है ॥सुकृत.३॥

अभी हो रही महफिल यहाँ पर नहीं वहाँ मैं आ सकता।
मरने वाला निश्चय मरेगा, मुझ आने से नहीं रुकता ॥
मर गये हो तो जला दो उन को मैं आकर के क्या करता।
समय नहीं है मेरे पास में वनों यहाँ से अब चलता ॥

शेर- सन्तरी आकर वहाँ पर हाल सब दरसाय जी,।
सुन सेठ बोला पुत्र के, ये वचन सुनलो राय जी ॥
जाओ दूसरा पुत्र सट्टा खेलता मिल जाय जी।
बात कह उसको बुलाओ, क्या वह सुनवाय जी ॥
गया सन्तरी द्वितीय पुत्र को सेठ हाल दरसाता है ॥सुकृत.४॥

तेजी मन्दी चली जोर से चाँस हाथ में आया है।
ऐसे में आ करके तूने क्यों मुझको दरसाया है ॥
जाओ नहीं है वक्त मुझे तो सट्टा अच्छा चलता है।
मर जाये मरघट ले जाना काम न मुझसे टलता है ॥

शेर- आकर हकीकत सब कहीं, तब सेठ यों दरसाय जी।
पुत्र मेरे है परन्तु काम क्या यहाँ आय जी ॥
पुत्र आधा तीसरा, इस वक्त रोटी खाय जी।
सन्तरी सुन सद्य घर आ पुत्र को दरसाय जी ॥
सेठ काल का ग्रास हो रहा क्या तू रोटी खाता है ॥सुकृत.५॥

कंवर कहे मैं अभी चलूँगा, आधी रोटी शेप रही।
इसको खाकर आता हूँ, यह आकर सन्तरी बात कही ॥
सेठ कहे आधा लड़का यह सुनी भूप कहे बात सही।
चौथा पुत्र पूरण है मेरा इसमें शंका रती नहीं ॥

शेर :-हाट पर बैठा अभी वह बाल साफ करवाय जी।
सन्तरी आ बात कह दी, सेठ पर भव जाय जी ।।
सुनकर उसीक्षण चल दिया नापित रहा ठहराय जी।
आधी हजामत ही हुई है, क्या कहेंगे राय जी ।।
सुने नहीं वह बात किसी की, ज्यों का त्यों ही आता हैं ।।सुकृत६।।

पुत्र पिता के चरण पड़ा और बोला दोनों जोड़ी हाथ।
क्या कारण है लाऊँ वैद्य को, फरमादो जो होवे बात ।।
उठा उसीक्षण छाती चिपका कहे सेठ सुन लो नर नाथ।
यह लड़का है पूरा मेरा देखो आया किस हालात ।।

शेर :-समय पर जो काम आवे, वही अपना होय जी।
संपति जो दान की है, वही निज की होय जी ।।
शेष धन नहीं काम आवे, नयन से लो जोय जी।
प्राज्ञ कृपा "सोहन" कहे लो, बीज सुकृत बोय जी ।।
धर्म साधना करलो बन्धव! सब स्वार्थ का नाता है ।।सुकृत७।।

—※—

२३ दिन भले तो सब भले।

दोहाः- देव गुरू और धर्म में, सच्ची श्रद्धा धार।
समकित में सेंठा रहे, लेवे जन्म सुधार ॥

(तर्ज :- हो भवियण मंगलिक शरणा चार.)

सुलटे दिन आवे तदा हो भवियण-पावे जग में नाम।
जो-2 चित्त में चिन्तवे-हो भवियण-सिद्ध होय सब काम "के" ॥१॥

श्रोता साँभलो-हो भवियण,-सुलट समय जब आय ॥ टेर ॥
धनपुर नामा शहर में, हो भवियण, धनदत्त है महिपाल।
राजनीति में दक्ष है, हो भवियण,
दीन दुःखी प्रतिपाल "के" ॥श्रोता.२॥

राणी कमला गुणवती-हो भवियण, षटगुण हृदय विशाल।
दास दासी सब है सुखी, हो भवियण,
जनता है खुशहाल "के" ॥श्रोता.३॥

कीर्ति नृप की सभी जगह, हो भवियण, फैल रही जगमांय।
श्रवण सुणी वहां आय के, हो भवियण,
गुणी जन आदर पाय "के" ॥श्रोता.४॥

रतनपुरी को विप्र है, हो भवियण, निर्धन दुःखी अपार।
भाग्य परीक्षा के लिए, हो भवियण,
चला तजी घर बार "के" ॥श्रोता.५॥

पापोदय से जीव को, हो भवियण, मिले न मांगे धान।
पुण्य प्रकट होवे यदा, हो भवियण,
लोक करे सन्मान "के" ॥श्रोता.६॥

धनपुर में चल आविया, हो भवियण, वैठा सर तट आय।
रजक आय इक यों कहे, हो भवियण,
अरज सुनो महाराय "के" ॥श्रोता.७॥

खर खोये कई दिवस हुए, हो भवियण, पता नहीं कहीं पाय।
संकेत किया तब विप्र ने, हो भवियण,
गधे वहाँ मिल जाय "के" ॥श्रोता.८॥

दान दक्षिणा पाय के, हो भवियण, आया धनपुर माँय ।
कुंभकार घर रोटिया, हो भवियण,
ठपके से बतलाया "के" ।।श्रोता.९।।

हुई प्रसिद्धी शहर में, हो भवियण, भूत भविष्य दरसाय ।
उसी समय नर राज का, हो भवियण,
हार चोर ले जाय "के" ।। श्रोता १० ।।

बुला विप्र से यों कहे हो भवियण, दूंगा द्रव्य अपार ।
देखो अपने ज्ञान से, हो भवियण,
कहां मिलेगा हार "के" ।। श्रोता ११ ।।

एक सप्ताह के मांयने, हो भवियण, यदि न आया हार ।
तो धर दूंगा कैद में, हो भवियण,
फिर नहीं हो छुटकार "के" ।। श्रोता १२ ।।

पता न पाया हार का, हो भवियण, निकल गई छः रैन ।
नींद न आवे रैन में, हो भवियण,
बोल रहा यूं बैन "के" ।। श्रोता १३ ।।

दोहा:- जल्दी आजा ए निन्द्रा, नहीं तो सुबह पड़ेगा सिन्द्रा ।
मार मारेला नरेन्द्रा, कहाँ गई है तू निन्द्रा ।।

निद्रा दासी यों सुनी, हो भवियण, चमकी चित्त के मांय ।
आवाज दे अरजी करे, हो भवियण,
ज्ञानी तुम सम नाय "के" ।। श्रोता १४ ।।

अब लज्जा म्हारी रखो, हो भवियण, दियो हार संभलाय ।
बुद्धि बिगड़ी माँहरी, हो भवियण,
लीनो हार उठाय "के" ।। श्रोता १५ ।।

और द्रव्य दीनो घणो, हो भवियण, नाम न करो प्रकाश ।
लाज बचे जीविका बचे, हो भवियण,
यही है दिल में आश "के" ।। श्रोता १६ ।।

दिवस सातवें नृप कहे, हो भवियण, लाओ विप्र आसन्न।
निवृत्त होकर विप्र भी, हो भवियण,
आयो चित्त प्रसन्न "के" ।। श्रोता १७ ।।

सभा बीच में यों कहे, हो भवियण, आयो हार मुझ पास।
ज्योतिष बल से रात में, हो भवियण,
डाल गये आवास "के" ।। श्रोता १८ ।।

नृप राणि मिल विप्र को, हो भवियण, दियो खूब धन माल।
लोक सभी गुण गा रहे, हो भवियण,
सुन करके सब हाल "के" ।। श्रोता १६ ।।

सभा बीच में एक दिन, हो भवियण, नृप पूछे दरसाय।
मुट्ठी में क्या चीज है, हो भवियण,
दो पण्डित बतलाय "के" ।। श्रोता २० ।।

नहीं तो तेरा धन सभी, हो भवियण, जब्त करूं इस बार।
सुन चमक्यो चित्त में अति, हो भवियण,
बुरी करे सरकार "के" ।। श्रोता २१ ।।

इतने दिन की आज ही, हो भवियण, पोल प्रकट हो जाय।
अब तो जावे आबरू, हो भवियण,
बोला ऐसे वाय "के" ।। श्रोता २२ ।।

दोहा :—दूब चरन्ता गधा देखिया, ठपके रोटी पाई।
निद्रा दासी हार बतायो, टीडा मौत अब आई ।।

टीडा नाम था विप्र का, हो भवियण, दशा सुलट जब आय।
नृप कर में टीडा मिला, हो भवियण,
जन-जन मुख गुण गाय "के" ।।श्रोता २३ ।।

भूप जागीरी देय ने, हो भवियण, बढ़ा दिया सम्मान।
पूर्व पुण्य जब साथ में, हो भवियण,
पग-पग होय निधान "के" ।। श्रोता २४ ।।

धर्म पुण्य संवल ग्रहो, हो भवियण, यत्र तत्र सुख पाय।
भव-भव में आनन्द मिले, हो भवियण,
मन इच्छित प्रकटाय "के" ।। श्रोता २५ ।।

प्राज्ञ कृपा "सोहन मुनि" हो भवियण, वाग-वार चेताय।
अमूल्य अवसर पाय के, हो भवियण,
नर भव सफल वनाय "के" ।। श्रोता २६ ।।

दो हजार छाईस का, हो भवियण, प्रथम आषाढ़ वुधवार।
सुदी तीज "रूपाहेली", हो भवियण,
छह ठाणा सुखकार "के" ।। श्रोता २७ ।।



२४ | नर जीवन : रत्नों का भाजन !

[तर्ज : लावणी छोटी]

सुन्दर मिल गया योग, इसे मत हारो।
सद्‌गुरु दे उपदेश हिया में धारो ।। टेर ।।

फिर भटकते लाख चौरासी माँही।
तब कठिन कठिनतर नर देही को पाई।
सुर सुरेन्द्र भी जिस पर रहे ललचाई।
वह मिली आपको सहज करी पुण्याई।
बार-बार नहीं मिले यो नर अवतारो ।। सद्० ।। १ ।।

कथा कहूँ एक सुनियो ध्यान लगाई।
सुनकर के लीज्यो सभी हिया के मांही।
कठियारो पाकर उत्तम चीज गमाई।
नहीं समझी कीमत खोई हाथ में आई ।।
समझायो भी नहीं समझ्यो मूर्ख सिरदारो ।।सद्०।। २ ।।

कमलावति में "श्री कमलसेन" महाराया।
है सद्‌गुण का भण्डार प्रजा मन भाया।
शरणागत पाये नित ही चरण की छाया।
दीन दुःखी हित करे समर्पण माया ।।
नहीं रहे राज में चोर जार हत्यारो ।। सद्० ।। ३ ।।

एक खेमो नामक रहे वहाँ कठियारो।
नित वन से लावे लकड़ी करे गुजारो।
फिर भी पेट भर मिले न कोई सहारो।
किस को देवे दोष, दोष कर्मा रो ।।
फटे वस्त्र है सोचे, समय निकारो ।। सद्० ।। ४ ।।

वर्षा काल में मेघ ने झड़ी लगाई।
वह तीन दिवस तक गया न लकड़ी ताँई।

हो गया दुःखी वह ईन्धन, नहीं घर मांही।
फिर तीन दिनों तक रोटी भी नहीं पाई ॥
ऐसे में मुझको देवे कौन उधारो ॥ सद्० ॥ ५ ॥

रुकी वृष्टि तब जावे जंगल मांही।
वहाँ रत्न जड़ित हांडी ठोकर से पाई।
चन्दन की लकड़ी मिली सो भारी बनाई।
घर लाकर सोचे कठिगारो मन मांही ॥
नई हंडिया में मक्की डाल उबारो ॥ सद्० ॥ ६ ॥

रत्न जड़ित हण्डिया को चूल्हे चढ़ाई।
चन्दन की लकड़ी दीनी मांय जलाई।
मक्की लाकर डाली, गूगरी तांई।
उस समय जोहरी गया उधर को आई ॥
मगमगाय हो गयो मोहल्लो सारो ॥ सद्० ॥ ७ ॥

सोचे जौहरी सुगंध कहाँ से आई,
चल सीधा वहाँ से आया उस घर मांही।
देख वहाँ का हाल सेठ फरमाई,
क्या करते हो यों इसे जलाकर भाई ॥
बन रहो गूगरी बोले यों कठियारो ॥ सद्० ॥ ८ ॥

कहे जौहरी इसको मती जलावे,
इसके बदले में मन चाहा धन पावे।
दे दे मुझको सोना, अभी मंगावे,
तोल बराबर सभी तुझे संभलावे ॥
बनी चीज तो बेचो, काम तुम्हारो ॥ सद्० ॥ ९ ॥

लगा लगाकर ताव जलादी सारी,
करदी सब की राख पास थी भारी।
हाँडी फूटकर हो गई न्यारी-न्यारी,
बनी गूगरी मिली राख में सारी ॥
अन्त समय पछताय हुओ जब छारो ॥ सद्० ॥ १० ॥

यों भटकत-भटकत जीव रूप कठियारो,
चन्दन सम आयु लायो साथ में भारो।
नर भव रूपी हांडों है रत नारो
काम भोग मक्का में जला दियो सारो ॥
सन्त जौहरी कहे इसे मत बारो ॥ सद् ॥ ११ ॥

नहिं मानी सीख वह अन्त समय पछताया,
खोकर नर भव सार अति दुःख पाया।
नर्क निगोद से बचना चाहो भाया,
करो भाव से नित ही संवर समाया।
अनन्त पुण्य से मिल गयो मनुष्य जमारो ॥ सद् ॥ १२ ॥

समझे सो लेकर लाभ यहां से जावे,
शालिभद्र और धन्ना ऋद्धि छिटकावे।
और कोई महाभाग जगत जस पावे,
काटे जग जंजाल संयम चित्त चावे ॥
'सोहन मुनि' कहे धन है जन्म उणांरो ॥ सद्० ॥ १३ ॥

दो हजार सतवीस चौमासो कीनो,
ताम्बावती-भिणाय रंग अति भीनो।
श्रावक गण ने खूब ही आग्रह कीनो,
तब परम दयालु गुरुवर ने कह दीनो ॥
दोनों क्षेत्रों में वरते मंगलाचारो ॥ सद्० ॥ १५ ॥

—※—

२५ | जहां फूट, वहां लूट है।

[तर्ज—राधेश्याम रामायण]

एके के आगे एका हो तो ग्यारह गुणा हो जाता है।
एक-एक को अलग करे तो, एक-एक रह जाता है ॥१॥
एका जहां पर होता है, वहां दुश्मन का नहीं जोर चले।
किन्तु फूट आ जाय वहां तो दुःख द्वन्द सब सहज फले ॥२॥
जनपुर में जनसिंह भूप के, बनसिंह पुत्र था बलकारी।
दीवान पुरोहित, सेठ पुत्र चारों में मित्रता थी भारी ॥३॥
एक समय चारों ही मित्र मिल, गये घूमने वन मांही।
सुन्दर खेत लख ईक्षु का मन चारों का गया ललचाई ॥४॥
चलो प्रथम ईक्षु को चूंसे तोड़ खेत से ले आवें।
लाकर चूंस रहे ईक्षु को इते कृषक वहां आ जावे ॥५॥
देख उन्हें यों सोचे आज तो, रंगे हाथ तस्कर पाये।
उपाय करूं ऐसा मैं जिससे अकल ठिकाने आ जाये ॥६॥
बिना मरम्मत नहीं समझेंगे, सत्ता शक्ति के धारी।
फूट डालकर काम बनाऊं डण्डे! कर तू तैयारी ॥७॥
कर जोड़ सामने आ बोला सद्भाग्य मेरा यहाँ पर आये।
कपड़ा बिछा भूमि पर बोला, गन्ना जी भरकर खायें ॥८॥
राजा दिवान पुरोहित का तो है यहां पर अच्छा आना।
सेठ पुत्र क्यों आया यहां पर, है इसका विरथा खाना ॥९॥
तीनों बोले बात ठीक है, तभी इसे झट बांध दिया।
तड़फ रहा था सेठ पुत्र पर ध्यान उन्होंने नहीं किया ॥१०॥
बिना दक्षिणा काम करे ना, क्यों यह मुफ्त में खाता है।
हुआ समर्थन दोनों का तब, पकड़ उसे भी लाता है ॥११॥
वेतन राज की खाता है, फिर मन्त्री पुत्र यहां क्यों आवे।
राजपुत्र तो है मालिक, पर इनका हक क्या बतलावे ॥१२॥
राजपुत्र कहे यह बात सही है मन्त्री पुत्र को बांध लिया।
फिर बोला यों राजपुत्र से मैंने, तुमको जान लिया ॥१३॥

टैक्स जमीं का लेते हैं ? फिर क्यों यहाँ पर गन्ना खाये ?
चोरी करते हुए कई दिन, चोर आज ही पकड़ाये ॥१४॥
बांध उसे भी खूब पीटकर, चारों को यों फरमाया।
आज्ञा मान आगे हो जावो, वरना लट्ठ पड़े भाया ॥१५॥
हुक्म मुआफिक चारो चल रहे, लोग देख विस्मय पाये।
किसान कहे ये तस्कर मेरे हाथ कठिनता से आये ॥१६॥
लोक हास परिहास करे वे मन ही मन में शरमावे।
एक दूसरे के दुःख को लख मन माँही सब दुःख पावे ॥१७॥
यह फल है इस फूट देवी का एक पुरुष से बंधवाये।
यदि न होती फूट आज तो क्या शक्ति कुछ कर पाये ॥१८॥
इन चारों को लेकर संग में राज सभा में चल आया।
कहे भूप से इन्हें दण्ड दें, निर्णय हित यहां पर लाया ॥१९॥
हिम्मत लखकर उस किसान की भूप कहे तू बतलादे।
किस तरह हाथियों को बांधे, यह बात मुझे सब समझादे ॥२०॥
उसने सब वृत्तान्त खोलकर, भूप सामने दरसाया।
एक एक में फूट डालकर, इन्हें बांधकर मैं लाया ॥२१॥
सुनकर के वृत्तान्त भूप ने दीना पद बलशाली का।
बुद्धि बल से बांध इन्हें बल किया नष्ट बलशाली का ॥२२॥
खूब किया सम्मान कृषक का धन दे घर पर पहुंचाया।
यथा योग्य दे दण्ड भूपने, सबके आगे फरमाया ॥२३॥
देखो फूट का फल सन्मुख है, एक चार को ले आया।
अतः आप खुश रहना चाहो, तजो फूट दिल से भाया ॥२४॥
प्राज्ञ प्रसादे, "सोहन मुनि" कहे, यह शिक्षा दिल में लाना।
दो हजार छब्बीस पौष में सिंगोली हो गया आना ॥२५॥

———

२६ | बुद्धि

— दोहा —

लोका लोक प्रमाण है, जिनका दर्शन ज्ञान।
ऐसे श्री वर्द्धमान का धरूँ हमेशा ध्यान।।
बुद्धि से संसार में, मानव पावे मान।
बुद्धि से सब सुख मिले, बुद्धि परम निधान।।

(तर्ज—छोटी लावणी)

कथा सुनो चित्त लाय, कहूँ यह प्यारे,
इस बुद्धि आगे बड़े २ जन हारे।।टेर।।

इक महिमंडन पुर शहर, अनुपम नामी,
जहाँ राज करे महिपाल नहीं है खामी।
करे सदा प्रतिपाल, प्रजा हित आनी।
न्याय नीति में निपुण मधुर है बानी।।
रानी कमला पतिव्रता गुण धारे।।इस बुद्धि. १।।

पुत्री विमला विमल, रूप गुण वाली,
है मिष्ट भाषिणी चाले चाल मराली।।
पढ़ने हित जावे पढ़े, लिखे चित्त डाली।
सब में है हुशियार रहे नहीं ठाली।।
विनय सहित नित विद्या चित्त में धारे।। इस बुद्धि. २।।

दीवान पुरोहित सेठ पुत्रियाँ साथे,
पूरण है जिनमें प्रीति करे संग बातें।।
एक दिन मिल करके चारों घूमने जावें।

संध्या समय सब चल के बाग में आवें ॥
इनको जाती देख, भूप मन धारे ॥इस वुद्धि. ३॥

मैं जाऊं इनके संग कहाँ ये जावे,
पीछे-पीछे चल कर बाग में आवे ॥
छिप करके देखे हाल, शंका चित्त लावे।
क्यों आई है बेवक्त रहस्य दिखलावे ॥
एकान्त बैठकर देखे नयन पसारे ॥इस वुद्धि. ४॥

निपट कार्य से राजकुमारी बोली।
वह गया, गया, यों मुख से वाणी खोली।
जावे तो मरजी नहीं बिछावें झोली ॥
हे सखी ! नहीं वो देख दूसरी बोली।
वह होता तो नहीं जाता, तीजी उच्चारे ॥ इस बुद्धि ५॥

चौथी कहे जो जाय, उन्हें जाने दो।
क्या मतलब है अब उसे वहां रहने दो ॥
चलो यहाँ से दुनियाँ कहे कहने दो।
मत रुको बात तज जल्दी पग बढ़ने दो ॥
देख दृश्य यह दिल में भूप बिचारे ॥ इस वुद्धि, ६॥

आई नहिं निद्रा नरपति रात बिताई,
सूर्योदय उनको सभा बीच बुलवाई।
क्या करती रात में बात, शरम नहीं आई।
हो ऊँचे कुल की कन्या लाज बिसराई।
किसके संग सम्बन्ध जुड़े हैं तुम्हारे ॥ इस वुद्धि, ७॥

छाया सन्नाटा सभा, बीच में भारी,
क्या कहते हैं, महिपाल यहाँ अबिचारी।
नहीं ये कन्यायें कुलटा, होय हमारी।
फिर किस कारण से शब्द कहे इस बारी।
सभी सभा सद् मन में ऐसे विचारे ॥ इस वुद्धि. ९॥

तभी हिम्मत करके राजकुमारी बोली,
हे राजन् ! हम तो नहीं है इतनी भोली ।।
करते तुमको राज्य, मूंछ हुई धोली ।
निर्णय नहीं लेकर यों ही शब्द दिया खोली ।।
हम नहीं हैं कुलटा नाथ! हृदय में धारें ।।इस बुद्धि. ९।।

नृप कहे रात में जो कुछ शब्द सुनाये,
उन सब के मुझको अर्थ साफ समझायें।
तब राज कुमारी सारा भेद बतलाये।
दीपक की घटना सभा बीच दरसाये ।।
वह गया, दीप बुझने से शब्द उच्चारे ।। इस बुद्धि. १०।।

तेल अगर होता तो वह नहीं जाता।
चोथी कहे जावे जाये काम निपटाता ।।
नहीं कोई भी पर पुरुष, वहाँ पर आता।
हम चारों ने जा सूत वहाँ पर काता ।।
सुनी वचन यह निजको नृप धिक्कारे ।। इस बुद्धि ११।।

तभी कहा पहली ने, यह तो वही है।
सुन कहे दूसरी इसके तो वह नहीं है।
तव कहे तीसरी बुद्धि तो उन सी ही हैं।
सुन चौथी बोलीं बात ठीक वेसी है ।।
भूप कहे तुमने क्या वचन उच्चारे ।। इस बुद्धि. १२।।

यह क्या ज्ञानी की बात पता नहीं पाया।
मैं हार गया तुम बँद करो यह माया ।।
ऐसी कर बातें मुझको खुब उलझाया।
क्या क्या है इसका रहस्य समझ नहीं पाया ।।
ज्ञान युक्त है सभी प्रसंग तुम्हारे ।। इस बुद्धि. १३।।

तब सखियाँ बोली सुनो आप महाराया।
हो माफ सभी अपराध तो जाय सुनाया ।।

है सभी गलतियाँ माफ भूप फरमाया।
तब कन्याओं ने सारा भेद बताया।।
सुने लगाकर ध्यान सभासद् सारे।। इस बुद्धि.।।१४।।

पहली कहें मैं बोली बैल दिखावे।
दूजी बोली पर सींग नजर नहीं आवे।।
तीजी कहे है बुद्धि तो उन जैसी।
तब चौथी बोली तू कहती है वैसी।।
सुनो महीपति न्याय हाथ में थाँरे।। इस बुद्धि.१५।।

सुन करके उनसे हाल, भूप शरमाया,
बिन सोचे कीना काम बैल कहलाया।
है बालायें निर्दोष, दोष लगवाया।
कर मिथ्या इन पर रोष मैं शब्द सुनाया।।
अब क्या होवे ना बात हाथ रही म्हारे।। इस बुद्धि. १६।।

बुद्धि प्रबल लख सभी, प्रशंसा कीनी।
धन्य २ कहे लोक कीर्ति बहु लीनी।।
क्षमा मांग कर भूप शाबासी दीनी।
है गौरव तुमको देख बुद्धि रंग भीनी।।
सम्मान सहित पहुंचाई निज निज द्वारे।। इस बुद्धि.१७।।

ऐसी कन्यायें थी जब, विदुषी यहाँ पे।
जिस स्थान पहुंचती नाम कमाती वहां पे।।
सदाचार युत्त जीवन होवे जहां पे।
नित रमा सरस्वती वास करे है तहां पे।
'मुनि सोहन' कहता प्राज्ञ गुरु के गुण गारे।। इस बुद्धि १८।।

—※—

२७ | नंदी सेणजी

दोहा—कर्ता भोक्ता स्वात्मा, समझो सब नर नार।
जिनवर के उपदेश को, दिल में लीज्यों धार ॥

(तर्ज :—द्रोण की)

सौभाग्य प्रदायक सदा चित्त में धारो।
महाराज दान दो चित्त शुद्ध लाई जी ॥
नन्दीसेण दे दान भविष्य में शुभ गति पाई जी ॥टेर॥

इक नन्दी ग्राम में रहे विप्र धन धारी,
महाराज घनो नित मौज मनावेजी।

करे खूब ही खर्च नहीं कुछ चिंता लावे जी।
एक दिवस विप्र के ऐसी दिल में आई,
महाराज यज्ञ कर विप्र बुलाऊंजी।

पुष्कल कर मिष्ठान्न सभी ब्राह्मण जीमाऊँ जी।
दिए निमंत्रण भेज यज्ञ के दिन का,
महाराज वस्तुएँ रहा मंगाई जी ॥नन्दी १॥

सोचे विप्र है काम सामने ज्यादा
महाराज सहायक किसे बनाऊं जी।
है पाड़ोसी इक विप्र उसे ही यहां बुलाऊं जी।
वह ब्राह्मण था पर जैन धर्म को पाले,
महाराज कार्य में दक्ष दिखायाजी।

बुला उसे तत्काल काम सब ही संभलाया जी।
यज्ञ संबंधी सब चीजें तुम लाना,
महाराज कमी रहे कुछ भी नाहीं जी ॥नन्दी २॥

तब कहे पड़ौसी पहिले निर्णय कर लो,
महाराज यज्ञ में जो बच जावे जी।

वह सभी चीज है मेरी और नहीं मुझको च्हावे जी ।
सुनी विप्र हाँ भर कर यह कह दीना,
महाराज बात मैं मानी सारीजी ।
बच जावे जो विप्र भोज से है सब थांरी जी ।
किया यज्ञ वहां लोग हजारों आये,
महाराज मिठाई कई बनाई जी ।।नन्दी ३।।

अब शेष रही सो सब सामग्री लेकर,
महाराज पड़ौसी निज घर आयाजी ।
रख सामग्री बैठ वहाँ पर भाव यह लाया जी ।
कोई मिले सुपातर योग दान दूँ कर से,
महाराज इत्त मुनिवर चल आयाजी ।
मास खमण के तप पारण में आहार बहराया जी ।
शुभ कर्म कमाकर काल वहाँ से कीना,
महाराज स्वर्ग में बहु ऋद्धि पाईजी ।।नन्दी ४।।

आयु भव स्थिति भोग वहां से च्यवकर,
महाराज राजगृह नगर में आयाजी ।
नृप श्रेणिक के घर जन्म लिया, महोत्सव मडवाया जी ।
प्रीति भोजकर सब को वहाँ बुलवाया,
महाराज करी सम्मान जीमायाजी ।
फिर माता ने श्री नन्दीसेण यह नाम बताया जी ।
पांच धाय कर पले खूब आनन्द से,
महाराज बढ़े दिन-2 हरसाई जी ।।नन्दी ५।।

जब आठ वर्ष के हुए, गये पढ़ने को,
महाराज बहत्तर कला सिखाई जी ।
श्री नन्दी सेण को दिया भूप से ला संभलाई जी ।
योग्य देख नृप कन्या पाँच सौ ब्याही;
महाराज प्रीति से वहु सुख भोगे जी ।

नहि उदय अस्त का ज्ञान, मस्त है पुण्य संयोगे जी ।
यज्ञ कराने वाला ब्राह्मण मरकर,
महाराज रूला चारों गति माँही जी ।।नन्दी ६।।

भव भ्रमण अनेकों कर गज भव में आया,
महाराज सिंचानक नाम धराया जी ।
किस तरह सिचांनक नाम हुआ, वह भी बतलाया जी ।
एक सहस हथिनी का स्वामी अपने मन में,
महाराज एकदा यह भय लाया जी ।
जो हथिनी जन्मे बालक मुझको हो दुख दाया जी ।
अतः होय जितने भी बच्चे उनको,
महाराज मौत पर दे पहुंचाई जी ।।नन्दीं ७।।

इक वक्त गर्भिणी हथिनी दिल में सोचे,
महाराज शिशु जितने भी होवें जी ।
निर्दय हो कर दन्ती सब को मार गिरावे जी ।
अतः बचाकर आँख यहाँ से जाऊं,
महाराज सोच सरिता तट आई जी ।
जहाँ रहे तपस्वी लोग वहां रह कर सुख पाई जी ।
कुछ समय बाद में जन्मा बालक वहाँ पर,
महाराज छोड़ वन माँय सिधाई जी ।।नन्दी ८।।

तापस सुन्दर बाल हस्ति को लख कर,
महाराज कुटी पे लेकर आवे जी ।
खूब पिलावे दूध नहीं दुख होने पावे जी ।
करे काम गज शिशु भी वहाँ पर ऐसा,
महाराज सुण्डभर जल ले आवे जी ।
बाग बीच में उगे हुए वृक्षों को पिलावे जी ।
इसलिए सिचांनक नाम हो गया जाहिर,
महाराज रहे नित आनन्द माँही जी ।।नन्दी ९।।

एक वक्त सिचानक आ सरिता के तट पर,
महाराज क्रीड़ा जल माँही करता जी ।
उस समय यूथ संग हाथी आया वन में फिरता जी ।
देख सिचानक आया दन्ति सन्मुख,
महाराज परस्पर करी लड़ाई जी ।
दिया दँत से मार सिचानक दन्ती ताँई जी ।
अब हुआ सिचानक सभी यूथ का स्वामी,
महाराज फिरे जंगल के मांही जी ।।नन्दी १०।।

कुछ दिनों बाद सिचानक मन में सोचे,
महाराज जन्म मां मुझको दीना जी ।
वैसे हथिणी गुप्त वहाँ जा प्रसव जो कीना जी ।
वह होगा मुझको आखिर में दुख दाता,
महाराज करु उपचार मैं ऐसा जी ।
तापस स्थान कर नष्ट सदा सुख पाऊं तैसा जी ।
गया वहाँ जहाँ तापस जन रहते है,
महाराज झोपड़िये सभी गिराई जी ।।नन्दी ११।।

सब भगे तपस्वी आ श्रेणिक से कहते,
महाराज दन्ति एक सुन्दर आया जी ।
वह आप योग्य है सुन राजा ने हुक्म लगाया जी ।
लाओ गज को पकड़ राज्य के मांही,
महाराज त्वरित जा गज ले आएं जी ।
सुन्दर लक्षण युक्त जान पट हस्ति बनाये जी ।
करे सवारी सदा भूपति उस पर,
महाराज विविध शृंगार सजाई जी ।।नन्दी १२।।
एक दिवस लख गज को तापस कहते,
महाराज दिया दुख सो दुख पाया जी ।

सुनी बात यह दन्ती दिल में रोष भराया जी ।
फिर उखाड़ कर आलान वहाँ से चलिया,
महाराज तापस कुटिया पर आया जी ।
दीना सभी बिखेर योगी जन अति पछताया जी ।
नृप आज्ञा से योद्धा पकड़ने आये,
महाराज किन्तु वश होवे नांही जी ।।नन्दी १३।।
तब नन्दी सेण जो चले दन्ती वश करने,
महाराज पास जा बोले वाणी जी ।
अप्पा चेव दमेयव्वो मत हनियो प्राणी जी ।
सुन हस्ती दिल में उहापोह यों करता,
महाराज जाति सुमिरन वहां पाया जी ।
देखा पूर्व भव ज्ञान लगा मन को समझाया जी ।
जाना परिचय पूरब भव का उनसे,
महाराज खड़ा हुआ पास में आई जी ।।नन्दी १४।।
ले सिचांनक को नन्दी सेण जी आये,
महाराज भूप लख विस्मय पाया जी ।
रणवीर नहीं कर सके उसे करके यह आया जी ।
उस समय विचरते शासन नायक स्वामी,
महाराज भाग्य से वहां पधारे जी ।
ज्ञानी तपसी लब्धिवंत मुनिवर हैं लारे जी ।
महावीर का आना सुनकर नृप के,
महाराज हृदय में खुशीयां छाई जी ।।नन्दी १५।।
नृप श्रेणिक, मन्त्री अभय, साथ है नन्दी,
महाराज प्रभु दर्शन को जावे जी ।
भरी परिषदा वीच प्रभु बाणी फरमावे जी ।
सुन भूपति प्रभु से अरजी ऐसे करता,
महाराज मेरे मन शंका आई जी ।
नन्दी सेण के वश में कैसे गज गया आई जी ।
तब वीर प्रभु ने पूरब भव समझाया,
महाराज दिया सम्वन्ध बताई जी ।।नन्दी १६।।

फिर पूछे भविष्य के लिए प्रभू फरमावे,
महाराज यहाँ कर पुण्य कमाई जी।
सुरगति में जा ऋद्धि भोग नर भव में आई जी।
फिर करणी करके मोक्ष गति में जासी,
महाराज सुनी मन में हरसाये जी।
श्रोता लेकर नियम वहाँ से निज घर आये जी।
नन्दी सेणा जी दिल माँही यों सोचे,
महाराज सयंम लू मन मैं आई जी ।।नन्दी१७।।

उस समय आय शासन देवी यों कहती,
महाराज अभी भोगावली बाकी जी।
मत लेवो संयम भार कहूं जिनवर कर साखी जी।
नहीं मानी किसी की महावीर ढ़िग आया,
महाराज प्रभुजी हाँ नहीं दीनी जी।
पर होकर के तैयार आप खुद दीक्षा लीनी जी।
ज्ञानाभ्यास कर तप में जोर लगावे,
महाराज उदय भोगावली आई जी ।।नन्दी१८।।

तप-करते करते विकार चित्त में छावे,
महाराज बहुत मन को समझावे जी।
फिर भी रुके न विकार भाव मरने के आवे जी।
यह सोच वहाँ से पर्वत पर जा पहुँचे,
महाराज गिरू मन में यह धारी जी।
खाते जम्पापात आई देवी उस वारी जी।
कहे मरो क्यों कभी न मृत्यु होगी,
महाराज कर्म गति उदय में आई जी ।।नन्दी१९।।

देवी देकर ज्ञान स्थान पर लावे,
महाराज मुनिवर करे तपस्या जी।
रोके पर नहीं रुके हृदय में वही समस्या जी।
एक वक्त छट्ठ के पारणे गोचरी जावे,
महाराज फिरत वैश्या घर आवे जी।

वहाँ कीनो बन्दना वैश्या ने मुनिराज सुनावे जी ।
दया पाल सुन वैश्या मुख से बोली,
महाराज आप यह क्या फरमाई जी ।।नन्दो२०।।

हो चमत्कार माया से काम चलेगा,
महाराज मुनि सुन हाथ उठाया जी ।
भर दिया चौक गणिका का वहाँ कंचन बरसाया जी ।
वैश्या देखी हाल त्वरित चरणों में,
महाराज झुकी यों अर्ज गुजारी जी ।
यह सभी साज सामान और मैं दासी थांरी जी ।
सुनि प्रार्थना मुनिवर वेश उतारा,
महाराज चले गणिका संग मांही जी ।।नन्दी२१।।

वहाँ करी प्रतिज्ञा नित उपदेश सुनाकर,
महाराज करूं दश नर को त्यारी जी ।
ले दीक्षा वीर के पास तभी लूं मुंह में बारी जी ।
यह नियम निभाते गणिका संग सुख भोगे,
महाराज आनन्द से समय बितावे जी ।
वैश्या समझे कल्प वृक्ष मुझ घर में आवे जी ।
एक दिवस योग से नव ही मानव चेते,
महाराज एक की कमी रहाई जी ।।नन्दी२२।।

नहीं गये भोजन हित नन्दी सेण जी घर पर,
महाराज नायिका यों कहलावे जी ।
भोजन की जा रही वक्त फिर क्यों नहीं आवे जी ।
जब पहर तीसरा हुआ, नहीं वे आए,
महाराज स्वयं वैश्या चल आई जी ।
कहती चलिये भोजन को क्यों वक्त बिताई जी ।
तब नन्दी सेण जी कहे एक नहीं आया,
महाराज कमी पूरी हुई नाहीं जी ।। नन्दी २३।।

तब वैश्या बोली एक आप हो जावें,
महाराज त्वरित सुन करके चेते जी ।

अब त्याग यहाँ सब भोग भार दीक्षा का लेते जी।
तुमने अच्छी बात कही है मुझको,
महाराज जीवन का कारंज सारूं जी।
जा जिनवरजी की शरण अभी मैं दीक्षा धारूं जी।
सुन गणिका गिर कर चरण अरज यों करती,
महाराज हंसी में बात सुनाई जी ।। नन्दी २४।।

अब मुझ से रहना दूर प्रतिज्ञा पालूं,
महाराज उसी क्षण सब तज दीना जी।
प्रभू पास आ त्वरित भाव जाहिर यों कीना जी।
लूंगा संयम भार प्रभु चरणों में,
महाराज सद्य दीक्षा ले लीनी जी।
शुद्ध भाव से नन्दी सेण मुनि करणी कीनोजी।
जप तप संयम से कर्म बन्ध क्षय कर के,
महाराज स्वर्ग में गया सिधाई जी ।। नन्दी २५।।

देव ऋद्धि सुख आयु पूरण भोगी,
महाराज मनुष्य भव माँही आवे जी।
लेकर संयम कर्म नष्ट कर मोक्ष सिधावे जी।
प्राज्ञ प्रसादे 'सोहन मुनि' यों कहता,
महाराज धर्मरस जिसमें आवे जी।
वही आत्मा कर्म काट शुभ गति में जावे जी।
तज कर पाप का मार्ग धर्म अपनावो,
महाराज मिले सुख भव भव माहीं जी ।। नन्दी २६।।

—※—

२८ | प्राज्ञ गुरु

(तर्ज—लावणी खड़ी)

दया निधे ! हे करुणा सागर ! जग में नाम कमाया है ।
श्रद्धेय यशस्वी प्राज्ञचन्द्र जी गुरुवर मन को भाया है ।।टेर।।
जीवन के है काम अनेकों उन्हें कहां तक गिन पाऊं ।
सहस्र जिह्वा करके भी मैं उनका पार नहीं पाऊँ ।।
उनही में से घटित एक घटना को यहां कहना चाऊं ।
सुनो सभी नर नार ध्यान से कथा आपको बतलाऊं ।।
कितनी थी अनुकम्पा दिल में इसमें यह दरसाया है ।।श्रद्धेय१।।

एक वक्त गुरुदेव विचरते जाटावास में आये हैं ।
गुरुवर का आना सुनकर के जन-मन आनन्द पाये हैं ।।
वाणी सुनने आस-पास से श्रावक श्राविका आये ।
ग्राम निवासी सभी कौम के वाणी सुन हरसाये हैं ।।
इन्द्रघटा ज्यूं वचन छटा लख, भविजन दिल सरसाया है ।।श्रद्धेय२।।

बड़ी रियाँ के राव विजय सिंह दर्शन करने को आये ।
वचन सुधा से अशान्त मन को शान्त तृप्त वे कर पाये ।।
उसी गांव की वृद्ध सरगरी समाचार यह सुन पायी ।
मेवाड़ देश से सन्त पधारे तो वह मन में हरसायी ।।
जाकर देखूं निज नयनों से स्नेह हृदय में आया है ।।श्रद्धेय३।।

चल कर वृद्धा घर से सीधी सभा स्थान पर आई है ।
नर नारी का ठाठ देखकर मन में विस्मय पाई है ।।
कैसे जाकर देखूं उनको आगे मारग नाहीं है ।
फिर भी हिम्मत करके बढ़ रही लकड़ी एक सहाई है ।।
लोग कहे है नहीं मार्ग क्या चित्त तेरा भरमाया है ।।श्रद्धेय४।।

उसी समय गुरुदेव प्राज्ञ ने सबको ऐसे फरमाया।
आने दो मत मना करो, सुन बुढ़िया का मन हरसाया ।।
पूंछे क्या मेवाड़ से आयें, हाँ भर गुरु ने बतलाया।
मातृ भूमि का नाम श्रवण कर प्रेम मात के भर आया ।।
देख रहे है सभी दृश्य यह बुढ़िया रुदन मचाया है ।।श्रद्धेय५।।

रोती रोती बोली मुझको पीहर आज नजर आया।
कई वर्षों के बाद कान में पीहर नाम वह गुजांया ।।
गुरुदेव ने सभी हकीकत जब लोगों से जानी है।
नहीं सहारा कोई इसके बस एकाकी मानी है ।।
मात ! तेरा सब प्रबन्ध हो गया यह उपदेश सुनाया है ।।श्रद्धेय६।।

उस ही दिन से चिन्ता उसकी खतम हो गयी खाने की।
रोटी कपड़ा मिले सदा अब फिक्र नहीं कहीं जाने की ।।
सदा यही कहती वो बुढ़िया पीहर से आये महाराज।
मुझ अनाथ का सुनकर दुःखड़ा बना गये सब मेरा काज ।।
मेरे थे सो मेरी सुनकर जीवन कष्ट मिटाया है ।।श्रद्धेय७।।

धन्य-२ गुरुदेव आपने कईयों के कष्ट मिटायें हैं।
जात पाँत का भेद छोड़ कर दुखी नजर में आये हैं ।।
जाति सहायक फंड सदा यह अमर कीर्ति फहराये है।
बालक विधवा अनाथ जिनसे अपना काम चलाये हैं ।।
एक अंश को ले 'सोहन' ने गुरुवर का गुण गाया है ।।श्रद्धेय८।।

—※—

२९ | मन कामना सिद्धि

[तर्ज : नेमजी की जान बनी भारी]

अहो निशि सौख्य काज धावे, शान्ति बिन सौख्य नहीं पावे ।।टेर।।
सुखी नहीं कोई जग मांही मिले चाहे सम्पति मन चाही ।
तथापि-तृष्णा अधिकाई-शान्ति नहीं लेने दे भाई ।।

दोहा : इस जगति के ऊपरे, मणि रतनों का ढ़ेर ।
देकर पूंछे अब तो शान्ति है-बोले चाहूँ फेर ।।
पार नहीं तृष्णा का पावे ।।शान्ति. १।।

मलेशिया देश के माँही, कारू सम्राट आतताई ।
द्रव कर संग्रह हरसाई । कोष लख गर्व रहा छाई ।।
दोहा : अनर्थ से धन संचियो, रहयो है मन में फूल ।
इतना धन है मेरे पास में सभी जगत तृण तूल ।।
फूल कर कुप्पा हो जावे ।।शान्ति. २।।

सन्त सौलन जी वहां आया-आदर दे समीप बैठाया ।
द्रव्य जा अपना दिखलाया-गर्व से ऐसे हरसाया ।।
दोहा : इतना धन इस भूमि पर-मिले-किसी के पास ।
सभी जगह तुम घूम चुके हो कह दो हो जो खास ।।
बात सुन सोलन फरमावे ।।शान्ति. ३।।

द्रव्य से सुख नहीं मिल पावे-अर्थ से अनर्थ ही थावे ।
पाय क्यों इतना गर्वावे-इसी से कभी प्राण जावे ।।
दोहा : आत्मिक सुख पाया बिना-सभी द्रव्य निष्काम ।
जिन्दे जी भी बदल जाय यह जाने जगत तमाम ।।
नाहक क्यों इसमें उलझावें ।।शान्ति. ४।।

सुनी सम्राट् जोश लाया, आदर बिन उनको कढ़वाया ।
सन्त समभाव हृदय लाया, स्थान निज वापस चल आया ।।

दोहा : कुछ समय पश्चात् ही शाह ईरानी आय ।
कैद करी कारू को संग में-लायाँ देश के मांय ।।
अनर्थ का फल यहां पर पावे ।।शान्ति. ५।।

क्रोध कर शाह जी दरसावे-दण्ड यहां मृत्यु का पावे ।
शुली पर इनको लटकावे-किसी की सुनने नहीं पावे ।।

दोहा : दुष्कृत हँस-हँस कर किया, सोचा नहीं अन्याय ।
संचय करके कोष भरा है उस का ही फल पाय ।।
भाग अब कहीं नहीं जावें ।।शान्ति. ६।।

नगर में फिरा उसे लावे-शुली लख कारू घबरावे ।
मृत्यु से कौन बचा पावे-उसी क्षण संत याद आवे ।।

दोहा : हाय ! बात समझी नहीं, कीना मैं अपमान ।
सत्य कही थी बात उन्होंने कौन बचावे प्राण ।।
बात सुन शाह विस्मय लावे ।।शान्ति ७।।

कहे शाह क्या चाहे इस बार-कारू ने कह दी बात पसार ।
ध्यान में नहीं आई उस बार-जान गया धन जगमें निस्सार ।।

दोहा : देकर के दुःख बहुत ही कीना संग्रह अर्थ ।
सौलन ने समझाया मुझको, कीना खूब अनर्थ ।।
समय पर बदला तू पावे ।।शान्ति. ८।।

शाह ने सत्वर छुड़वाया, कारू को निजपुर पहुंचाया ।
संत की वाणी मन लाया, उसी ने जीवन बचवाया ।।
समझो मित्रों ! अर्थ बस, करो कभी न अनर्थ ।
'सोहन मुनि' कहे रहो नीति से, पड़ो न दुर्गति गर्त ।।
सदा सन्तोषी सुख पावे ।।शान्ति. ९।।

—*—

30 | सत्संग दुःख हरे

(तर्ज :- द्रोण)

सन्त समागम सदा कष्ट हरता है,
महाराज सहज इच्छा फल जावे जी।
जो श्रद्धा से जा सन्त चरण में शीश झुकावे जी ।। टेर ।।
एक धन पुर नामा शहर अति गुलजारी,
महाराज देख सुर नर मन मोहे जी।
तिहाँ चन्द्र सेन नरनाथ इन्द्र सम सब में सोहे जी।
धन दत्त सेठ के विजया नाम सेठाणी,
महाराज तनय सुरसुर सुखकारी जी।
है लक्ष्मी का वास दास दासी अनपारी जी।
बालकवय में मात पिता तज करके,
महाराज साथ यमलोक सिधावे जी ।। जो श्रद्धा.१।।
रामत कर गई रमा पास नहीं पैसा,
महाराज जीवन अब है दुखकारी जी।
नहीं सहारा रहा कष्ट भी भोगे भारी जी।
खान - पान की सार रही नहीं घर में,
महाराज दुःख से दिवस बितावे जी।
सगे संबंधी रहे दूर कोई पास न आवे जी।
यह देख व्यवस्था सुरसर दिल में सोचे,
महाराज अन्त इसका कब आवे जी ।। जो श्रद्धा. २ ।।
कब बनूं सुखी मैं, दुख मेरा कब जावे
महाराज धार दिल में जब सोया जी।
पिछली रात दह अर्ध नींद में सुपना पाया जी।
मानो देवता सन्मुख आ यों कहता
महाराज कहूँ तुझको हितकारी जी।
यहाँ से योजन चार चला जा तू इस वारी जी।

वहाँ पर झुकना सिद्ध पुरुष के पद में
महाराज भावना सिद्ध हो जावे जी ।। जो श्रद्धा. ३ ।।

उस ही क्षण वह चला सदन से सत्वर
महाराज योजन एक चलकर जावे जी ।
देखा रमणिक स्थान वहीं पर वह ठहरावे जी ।
उस समय वहाँ एक वृद्धा चलकर आई
महाराज बात करके हरषाई जी ।
करके आग्रह सुरसर को अपने घर लाई जी ।
भोजन जिमाकर सभी हाल तब पूछे
महाराज कंवर भी सच दरसावे जी ।। जो श्रद्धा. ४ ।।

सुन कर बोली सुनो समस्या मेरी
महाराज सुता मम मोटी हो गई जी ।
बार-बार कहूँ शादी की नहीं करे सुनाई जी ।
वह कहती मुझको सवा लक्ष का हीरा
महाराज कोई नर लाकर देवे जी ।
मैं उसी साथ में विवाह करूँ यह मुख से कहवे जी ।
अतः कष्ट मेरा यह कब मिट जावे,
महाराज निर्णय इसका ले आवे जी ।। जो श्रद्धा. ५ ।।

हाँ भर कर के वह रहा रात आनन्द में
महाराज प्रभाते हुआ रवाना जी ।
चला एक योजन तब श्रम से हुआ पसीना जी ।
अब चलने की भी शक्ति रही नहीं तन में
महाराज रहूँ इस जंगल मांही जी ।
तभी झोंपड़ी एक दृष्टि में उसके आई जी ।
वहाँ आकर देखा आश्रम है गुलजारी
महाराज सन्यासी ध्यान लगावे जी ।। जो श्रद्धा. ६ ।।

ध्यान खोलकर देखा एक अतिथि
महाराज प्रेम से पास बुलावे जी ।

अच्छा आसन दे उसको फल फूल खिलावे जी।
हुई परस्पर वात स्नेह से सारी
महाराज वात सुर सुर दरसावे जी।
सिद्ध पुरुष के पास जाऊँ ऐसे वतलावे जी।
तभी सन्यासी कहै सुनो तुम मेरी
महाराज कष्ट निज का दरसावे जी ॥ जो श्रद्धा. ७ ॥

साधु जीवन में तीस वर्ष वीताये
महाराज अभी मन नहीं सध पाया जी।
यही दु:ख है मेरे मन में तुम्हें सुनाया जी।
जाकर इसका समाधान ले आना
महाराज भला में तेरा मानूं जी।
होगा सहायक संयम का ऐसा दिल जानूं जी।
दे आश्वासन चला वहाँ से सत्वर
महाराज योजन एक चलकर आवे जी ॥जो श्रद्धा. ८॥

छोटा ग्राम लख ठहरा वहीं पर सुरसर
महाराज इत्ते एक माली आवे जी।
देकर आदर भाव इन्हें घर पर ले जावे जी।
कहीं वात तब माली ऐसे बोला
महाराज दुख मेरा वतलाऊँ जी।
पिता हुक्म नहीं पाल सका मैं क्या दरसाऊँ जी।
मरते वक्त यह बात कही थी मुझको
महाराज वृक्ष एक यहाँ लगावे जी ॥ जो श्रद्धा ९ ॥

इस घर के ईशान कोण के माँही
महाराज चम्पा का वृक्ष उगावे जी।
किया खूव ही यत्न तथापि नहीं लग पावे जी।
यही समस्या सदा खटकती दिल में
महाराज इसी का हल ले आवे जी।
नहीं विसरुँ उपकार आपका यों दरसावे जी।

सुरसर कहे मैं निश्चय निर्णय लाऊँ
महाराज कही यों सद्य सिधावे जी ।। जो श्रद्धा. १० ।।

आया अटवी बीच झोंपड़ी माँही
महाराज सौम्याकृति लख हरसाया जी ।
नहीं देखी ऐसी सूरत भू पर विस्मय पाया जी ।
वातावरण भी आकर्षक सब यहाँ का
महाराज आत्मविश्वास जमाया जी ।
होगा निश्चय कार्य सिद्ध मन में यों लाया जी ।
सिद्ध पुरुष कहे सभी समस्या तेरी,
महाराज ध्यान में मेरे आवे जी ।। जो श्रद्धा. ११ ।।

किन्तु सुन ले तीन बात से ज्यादा
महाराज नहीं मैं बतला सकता जी ।
मेरे ऐसा नियम यही मैं तुझको कहता जी ।
सुनकर सुरसर असमंजस में सोचे
महाराज चार बातें है कहनी जी ।
दे आया विश्वास बात किसकी है टलनी जी ।
सुरसर कहे मुझे चार बात है करनी
महाराज और नहीं मुझको चावे जी ।। जो श्रद्धा. १२।।

सिद्ध कहे नहीं तीन सिवा बतलाऊँ
महाराज बात सुन यों दिल धारे जी ।
जिनको दिया विश्वास उन्हीं का कारज सारे जी ।
अपनी समस्या छोड़ अन्य की पूछूँ
महाराज सिद्ध सब उत्तर दीना जी ।
एक एक का मर्म खोल कर बतला दीना जी ।
लेकर सब का उत्तर सद्य चल दीना
महाराज प्रथम माली घर आवे जी ।। जो श्रद्धा. १३ ।।

देकर अति सम्मान बात सब पूछे
महाराज हाल सुरसुर दरसावे जी ।
इस कोने में द्रव्य गढ़ा है यों बतलावे जी ।

उस ही क्षण भू खोद अर्थ संभारे
महाराज चरु वहाँ धन का पावे जी।
चालीस सहस्र लख मोहरें मन में अति हरसावे जी।
माली कहे यह सभी दीनार तुम्हारी
महाराज इन्हें संग में ले जावे जी ।। जो श्रद्धा १४ ।।
सुरसर कहे क्यों नाहक बात बनावो,
महाराज नहीं कुछ भी हक मेरा जो।
जो निकला है यहां द्रव्य सभी पर हक है तेरा जी।
माली कहे यह मिला भाग्य तेरे से,
महाराज समस्या हल कर लायेजी।
अतः अर्थ पर हक तुम्हारा तुम ले जायें जी।
आपस में कर निर्णय आधी कीनी,
महाराज द्रव्य ले आगे आवे जी ।।जो श्रद्धा १५।।
गया सन्यासी पास बात यों कीनी,
महाराज सभी बीतक दरसावे जी।
थे गृहीवास में कोटि पति सुख में दिन जावेजी।
एक वक्त भावना ऐसी दिल में आई,
महाराज सभी तज करके जाना जी।
नहीं कुछ भी जावे संग होऊ जब यहां से रवाना जी।
यहीं सोच कर निकला घर से बाहर,
महाराज भविष्य का संशय लावेजी ।। जो श्रद्धा १६।।
लिया पास में सवा लक्ष का हीरा
महाराज इसी से नहीं सूध पावे जी।
बार-बार यह ध्यान रहे कहीं खो नहीं जावेजी।
सुन करके वृतान्त संत यो सोचे,
महाराज सत्य है कारण याही जी।
अतः इसे अब रखू पास में हरगिज नाही जी।
सोच उसी क्षण हीरा ला कर दीना,
महाराज नहीं मेरे यह चावेजी ।।जो श्रद्धा. १७।।
है आतम साधना माँही बाधक वस्तु,
महाराज उसे रख अब क्या करना जी।

जो मानव भव का नाश करे, क्यो उसको रखना जी ।
कर्त्तव्य संतका उसे ध्यान में आया,
महाराज ध्यान कर मन स्थिर लाया जी ।
माना बहु उपकार हृदय में शान्ति पाया जी ।
लेकर हीरा सवा लक्ष का वहाँ से,
महाराज वृद्धा घर चल कर आवे जी ।।जो श्रद्धा.१८।।
सुरसर को लख माँजी हो गये राजी,
महाराज खूब आदर दे बोली जी ।
सिद्ध पुरुष की बात कहे मुझको अनमोली जी ।
सिद्ध पुरुष की बात सुनो तुम माँजी,
महाराज कही सो सब दरसाऊं जी ।
होगी जल्दी सफल कामना सच बतलाऊं जी ।
यह कह कर हीरा सद्य हाथ में दीना
महाराज देख कंवरी हरसावे जी ।।जो श्रद्धा १९।।
सुरसर के संग हुआ विवाह आनन्द से
महाराज नार धन ले घर आया जी ।
करे खूब आनन्द भोग सब मन का चाया जी ।
संत दर्श से फली भावना मन की
महाराज समस्या पूरी हो गई जी ।
सुपने में जो देव कही वह सच्ची मिल गई जी ।
यों संत समागम मन की इच्छा पूरे
महाराज श्रद्धा जब दिल में आवे जी ।।जो श्रद्धा २०।।
कुछ समय रहा संसार मांय वह सुरसर,
महाराज अन्त में यूं दिल लावे जी ।
तज करके संसार आत्म का कार्य बनावें जी ।
मिला योग एक वक्त संत पुरुषों का
महाराज वाणी सुन मन में धारे जी ।
लेकर संयम भार आत्म का कारज सारे जी ।
प्राज्ञ प्रसादे 'सोहन मुनि' यों कहता
महाराज श्रद्धा सब काम बनावे जी ।।जो श्रद्धा २१।।

—*—

३१ | विनय से ज्ञान

[तर्ज—कोरो काजलियो]

नहीं आवे विनय बिन ज्ञान, सुनियो नर नारी ।। टेर ।।

विनय बिन नहीं ज्ञान का एजी होवेगा विस्तार ।। १ ।।सुनियो०।।
राज गृही का महीपति कोई श्रेणिक नाम उदार ।। २ ।।सुनियो०।।
रानी चेलणा पतिव्रता कोई-शीलवती पट नार ।। ३ ।।सुनियो०।।
एक समय प्रभु वीर से कोई सुनी बात भूपाल ।। ४ । सुनियो०।।
महासती है चेलणा कोई सतियों में सिरदार ।। ५ ।।सुनियो०।।
वंदन करके आविया कोई भूपति निज आवास ।। ६ ।।सुनियो०।।
कहे सती से महीपति कोई कह दो मन की आस ।। ७ ।।सुनियो०।।
कैसा भवन तुम चाहती कोई देवो साफ प्रकाश ।। ८ ।।सुनियो०।।
सती कहे एक स्तंभिया कोई होवे मुझ आवास ।। ९ ।।सुनियो०।।
अभय बुला आदेश दे कोई करो भवन तैयार ।।१० ।।सुनियो०।।
बुला मन्त्री सुथार को कोई ले गया विपिन मझार ।।११ ।।सुनियो०।।
भारी तरुवर देखने कोई खाती योग्य बताय ।।१२ ।।सुनियो०।।
अभय हृदय में सोचियो यह देवाधीन तरुराय ।।१३ ।।सुनियो०।।
करी तपस्या देव को कोई याद किया [illegible] ।।१४ ।।सुनियो०।।
अमर आय हाजिर हुआ कोई चरण नमाया शीश ।।१५ ।।सुनियो०।।
इस तरु में है वास मुझ तुम मत काटो तरुराय ।।१६ ।।सुनियो०।।
षड ऋतु फल दे बाग में यह भवन करूँ सुखदाय ।।१७ ।।सुनियो०।।
जैसा कहा वैसा किया उस सुर ने सही [illegible] ।।१८ ।।सुनियो०।।
सती वहां रहने लगी कोई रख [illegible] ।।१९ ।।सुनियो०।।
वहां एक चांडाल की कोई नारी दोहद पाय ।।२० ।।सुनियो०।।

रस पीऊं मैं आम का कोई दोहद पूरण पाय ॥२१ ॥सुनियो०॥
पति से सब हालत कही मुझे आम बिना नहीं चैन ॥२२ ॥सुनियो०॥
बिन ऋतु कैसे ला सकूं उस पति ने कह दिया बैन ॥२३ ॥सुनियो०॥
नारी कहे सति बाग में कोई निश्चय मिलसी आम ॥२४ ॥सुनियो०॥
विद्या से ला दीजिये, मैं पाऊंगी आराम ॥२५ ॥सुनियो०॥
बाग बाहर मातंग ने, आ देखा वृक्ष रसाल ॥२६ ॥सुनियो०॥
किन्तु हाथ पहुँचे नहीं तब आया मन मे ख्याल ॥२७ ॥सुनियो०॥
अवनमनी विद्या बले कोई इच्छित ले लिये आम ॥२८ ॥सुनियो०॥
उन्नमनी से ऊंची करी वह पहुंचा है निज धाम ॥२९ ॥सुनियो०॥
पूर्ण आश लख नार की वह हर्षित हुआ अपार ॥३० ॥सुनियो०॥
टूटे फल लख वृक्ष के कोई रक्षक आया चाल ॥३१ ॥सुनियो०॥
महिपति से कर जोड़ के कोई सुना दिया सब हाल ॥३२ ॥सुनियो०॥
सुन कर नृप ने बुला लिया कोई तत्क्षण अभयकुमार ॥३३ ॥सुनियो०॥
ऐसा चोर यहां कौन है जो करे अभय उत्पात ॥३४ ॥सुनियो०॥
किसी समय रणवास में कोई कर जावे उत्पात ॥३५ ॥सुनियो०॥
अतः पकड़ कर लाइये कोई सात दिनों के माँय ॥३६ ॥सुनियो०॥
वरना चोर समगति करुं कोई दीन्ही नृप फरमाय ॥३७ ॥सुनियो०॥
आज्ञा पाकर के चला वह अभय कवंर उस वार ॥३८ ॥सुनियो०॥
छह दिन यों ही चले गये नहीं निकला कुछ भी सार ॥३९ ॥सुनियो०॥
छठे दिन की रात में वहाँ हो रहा नट का खेल ॥४० ॥सुनियो०॥
चोर जुआरी लंपटी वहाँ सभी नरों का मेल ॥४१ ॥सुनियो०॥
देरी लख नट आने में यों बोले अभय कुमार ॥४२ ॥सुनियो०॥
एक कथा तुमको कहूँ दो उत्तर हिये विचार ॥४३ ॥सुनियो०॥
वसन्त पुर इक शहर में रहे जीरण साहूकार ॥४४ ॥सुनियो०॥
नार सुशीला पतिव्रता है सुन्दर घर में नार ॥४५ ॥सुनियो०॥
जिन दत्ता कन्या भली है शचि सम रुप प्रकाश ॥४६ ॥सुनियो०॥
पढ़ लिखकर होशियार हो-हुई सद् गुण की वह राश ॥४७ ॥सुनियो०॥

पति पाने की ले इच्छा वह कामदेव के पास ॥४८ ॥सुनियो०॥
जाकर नित सेवा करे कोई बाँध भविष्य की आस ॥४९ ॥सुनियो०॥
पूजा हित उद्यान से कुछ पुष्प लिया है तोड़ ॥५० ॥सुनियो०॥
माली आ गया बाग में कोई पकड़ लिया है चोर ॥५१ ॥सुनियो०॥
देख छवि देह की तदा कोई लगा काम का बाण ॥५२ ॥सुनियो०॥
माली ने अरदास की मुझ इच्छा देवो पूर ॥५३ ॥सुनियो०॥
जिन दत्ता कहने लगी तुम सुनियो ध्यान लगाय ॥५४ ॥सुनियो०॥
तन मेरा छूना नहीं यह नीति वचन बताय ॥५५ ॥सुनियो०॥
॥श्लोक॥ अस्पृशा गोत्रजा वर्षाऽधिका प्रव्रजिता तथा।
नाष्टौ गम्याः कुमारी च-मित्र-राज-गुरु-स्त्रियः ॥
नीति वचन सुनकर कहें मैं तुझे तजूं इस बार ॥५६ ॥सुनियो०॥
किन्तु विवाह पश्चात ही यहाँ आना पहली बार ॥५७ ॥सुनियो०॥
स्वीकृत करके बात को वह चल आई निज धाम ॥५८ ।सुनियो०॥
चन्द समय पश्चात् ही कोई विवाह किया शुभ ठाम ॥५९ ॥सुनियो०॥
प्रथम रात में यों कहे मुझ प्रण सुनिये पतिराज ॥६० ॥सुनियो०॥
मैंने माली को दिया वह वचन निभाऊं आज ॥६१ ॥सुनियो०॥
सत्य प्रतिज्ञा जानकर तब-पति ने किया आदेश ॥६२ ॥सुनियो०॥
आज्ञा पाकर वह चली कोई सजकर सुन्दर वेश ॥६३ ॥सुनियो०॥
रास्ते में तस्कर मिले वे बोले यों तत्काल ॥६४ ॥सुनियो०॥
वस्त्राभूषण खोलकर तुम दो भूमि पर डाल ॥६५ ॥सुनियो०॥
वह बोली मैं जा रही कोई प्रण पालन को आज ॥६६ ॥सुनियो०॥
वापिस आते ही तुम्हें मैं दे दूंगी सब साज ॥६७ ॥सुनियो०॥
आज्ञा दे तस्कर कहें हम यहीं करे इन्तजार ॥६८॥ सुनियो०॥
वापिस आते ही हमें तुम दे देना सब सार ॥६९॥ सुनियो०॥
आगे जाते असुर मिला कोई खाऊंगा इस बार ॥७०॥ सुनियो०॥
उसको भी समझा चली वह आई बाग मझार ॥७१॥ सुनियो०॥
माली से वह यों कहे यह प्रथम रात है आज ॥७२॥ सुनियो०॥

प्रण पालन हित आने को कोई दी आज्ञा पतिराज ॥७३॥ सुनियो०॥
सत्य प्रतिज्ञा जानकर कोई कीन्ही धर्म की बहन ॥७४॥ सुनियो०॥
वस्त्राभूषण दे कहे कोई क्षमा करो मुझ कहन ॥७५॥ सुनियो०॥
राक्षस भी पथ में मिला कोई पूंछे सारी बात ॥७६॥ सुनियो०॥
वह बोली भगिनी बना वह बन गया मेरा भ्रात ॥७७॥ सुनियो०॥
सुनकर राक्षस यों सोचे-क्या मैं हूँ उससे नीच ॥७८॥ सुनियो०॥
इस अबला को खाय के क्यों पड़ूं नरक के बीच ॥७९॥ सुनियो०॥
उसने भी उसको तजी वह पहुंची तस्कर पास ॥८०॥ सुनियो०॥
सुनकर उसकी बात को कोई हुआ हृदय विश्वास ॥८१॥ सुनियो०॥
तस्कर दे वस्त्र-भरण कोई पहुंचाई निज स्थान ॥८२॥ सुनियो०॥
पति पास में आ गई वह रखकर अपनी शान ॥८३॥ सुनियो०॥
सब घटना निज कंत को कह दीनी आदि अन्त ॥८४॥ सुनियो०॥
पति भी हर्षित हो गया कोई सुनकर के विरतन्त ॥८५॥ सुनियो०॥
चारों में किसने किया कहो सबसे दुष्कर काम ॥८६॥ सुनियो०॥
दैत्य, चोर, माली पती अब कहो सोचकर नाम ॥८७॥ सुनियो०॥
नारी प्रेमी यो कहें है पति का दुष्कर काम ॥८८॥ सुनियो०॥
लंपटी जन कहने लगे-माली का काम प्रधान ॥८९॥ सुनियो०॥
भूखे नर कहे दैत्य का ले चोर चोर का नाम ॥९०॥ सुनियो०॥
उस ही क्षण चाण्डाल को कोई लीना तस्कर जान ॥९१॥ सुनियो०॥
पकड़ उसे मंत्रीश ने कोई पूंछ लिया सब हाल ॥९२॥ सुनियो०॥
भय के मारे कह दिया कोई है यह मेरी चाल ॥९३॥ सुनियो०॥
आम चुरा कर ले गया मैं नारी दोहद काज ॥९४॥ सुनियो०॥
मारो या तारो मुझे कोई हो गया पूर्ण अकाज ॥९५॥ सुनियो०॥
मंत्री ने ला भूप को कोई चोर दिया संभलाय ॥९६॥ सुनियो०॥
श्रेणिक लख कर चोर को कोई शूली हुक्म सुनाय ॥९७॥ सुनियो०॥
अभय मंत्री कहने लगा मेरी अरज सुनो है नाथ ॥९८॥ सुनियो०॥
दो विद्या इस पास में कोई चली न जावे साथ ॥९९॥ सुनियो०॥

श्लोक—बालादपि हितं ग्राह्य-ममेध्यादपि कांचनम् ॥
नीचादप्युत्तमा विद्या, स्त्रीरत्नं दुष्कुलादपि ॥

भूप कहे चाण्डाल से है दो विद्या तुझ पास ॥१००॥सुनियो०॥
वह मुझको दे दीजिये कोई पूरण हो मम आश ॥१०१॥सुनियो०॥
मातंग कहे ले लीजिये मैं देने को तैयार ॥१०२॥सुनियो०॥
सिंहासन पर बैठकर मैं ले लूं शिक्षा धार ॥१०३॥सुनियो०॥
नीचे मातंग को बिठा कोई विद्या ले महाराय ॥१०४॥सुनियो०॥
सुना रहा भंगी उन्हें पर विद्या आवे नांय ॥१०५॥सुनियो०॥
बहुत समय पूरा हुआ तब भूप कहे झुंझलाये ॥१०६॥सुनियो०॥
खोटाई मन में धरी तू अक्षर मुझे सुनाय ॥१०७॥सुनियो०॥
तब मंत्री कहने लगा कोई विनय बिना नहीं आय ॥१०८॥सुनियो०॥
नीचे आप विराजिये और ऊंचा इसे बिठाय ॥१०९॥सुनियो०॥
ज्यों ही ऐसा कर लिया कोई आ गयी विद्या सार ॥११०॥सुनियो०॥
उसे मृत्यु से मुक्त बना दिया पहुंचा अपने द्वार ॥१११॥सुनियो०॥
विनय धर्म का मूल है यह फरमाया जिनराय ॥११२॥सुनियो०॥
प्राज्ञ कृपा 'सोहन मुनि' कहे विनय मोक्ष ले जाय ॥११३॥सुनियो०॥

—※—

सोहन काव्य कथा मंजरी भाग ४

~शुद्धि-पत्र~

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
५	१२	मर्म	मम
५	१४	भेरी	तेरी
७	२	मत्त	भक्त
७	२९	चेद	चन्द
११	२५	सता	सुता
१९	अन्तिम	जा	जी
२३	२१	खरा	खरी
२९	१५	स्थान स्थान	स्थान
४३	३	जावन	जीवन
४६	६	हावे	होवे
५८	१२	निज मंझार	निज भवन मंझार
६४	७	पार	पर
७०	५	दरसाते हैं	दरसाता है
७३	३	बतलाया	बतलाय
७५	४	बाग-बार	बार-बार
७६	५	फिर	फिरे
७८	३	रत नारो	रतनां रो
७८	१३	कोई	केई
९०	७	सेणा	सेण
१०१	२३	सूध	सध

—※—